कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन चेतना एवं सामाजिक विसंगतियाँ

भारतीय समाज सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से अत्यंत विविधताओं वाला समाज है। यहाँ हर समाज की अपनी सामाजिकता है और उसकी अपनी सांस्कृतिक पहचान है। साथ ही इस देश की सामाजिक व सांस्कृतिक बुनावट में गहरी समानताए व गहरी विषमताए भी व्याप्त है। जिसके कारण भारतीय समाज व संस्कृति में अनेकता में एकता दर्शन हमें होते है। यहाँ ग्रामीण, कस्बाई व नागर समाज व संस्कृति के अपने मान-मूल्य है। उनकी अपनी संरचना, उनकी अपनी खूबी व खामियाँ है। इसकी अपनी परम्पराएं है। इसकी अपनी रीति-रिवाज है। रूढ़ियाँ है। लेकिन इन सबके उपरांत उत्सवधर्मिता भारतीय समाज व संस्कृति के वलय में स्थिति है। यह इसकी सबसे अलहदा पहचान है। यह सामाजिक व सांस्कृतिक दोनों है। और यह कई तरह के अंतर्विरोध के बावजूद भी है। मध्यवर्गीय जीवन व उसकी सामाजिक विसंगतियाँ भारतीय समाज में वक्षस्थल की भांति है। जीवन चेतना व सामाजिक विसंगति का निर्माण बहुत कुछ सामाजिक संरचना से निर्मित व उसी पर निर्भर है। सामाजिक संरचना से सामाजिक सोच का निर्माण भी होता है। और इसी सामाजिक संरचना से सामाजिक विसंगतियाँ भी उपजती है। चेतना का निर्माण सामाजिक परिवेश से होता है जबकि विसंगतियों का निर्माण सामाजिक भेद-भाव जनित होता है।

सामाजिक चेतना से तात्पर्य

चेतना का तात्पर्य समझ से है, बुद्दि के विकास से है, विचार से है। मनुष्य में सोचने-समझने की जो शक्ति है, जो क्षमता है वही मनुष्य की चेतना है। कोई भी मनुष्य अपनी चेतना द्वारा ही क्रियान्वित होता है। जो बोध शक्ति है वही चेतना शक्ति है। यानि मनुष्य को क्रियान्वित करने वाली जो शक्ति है वह उसकी चेतना है। सजीवता, जीवंतता व गतिशीलता यह हमारी चेतना के हिस्से है। जिसे हम व्यक्ति चेतना कह सकते है। किसी समाज की सामाजिक समझ ही उसकी

सामाजिक चेतना है। सामाजिक चेतना का निर्माण समाज के परिवेश से होता है। जैसे जिस समाज में जिस प्रवृति के लोग होते है उस समाज की चेतना उस खास प्रवृति की चेतना होती है। वैचारिक उन्नति किसी भी समाज की सामाजिक चेतना का प्रतिनिधितत्व करती है। यह चेतना अलग-अलग हिस्सों में भी हो सकती है। समाज के सोचने, समझने का ढंग उसके क्रियान्वयन उसकी गतिविधियां उसकी क्रियाशीलता उसकी बात व्यवहार यह सब उसकी चेतना के हिस्से है। इन्ही से वह अपनी चेतना का निर्माण विनिर्माण करता है। विचार शक्ति ही उसकी चेतना शक्ति है। चेतना ही हमे गतिशील बनती है। चेतना के चलते ही समाज में परिवर्तन होते है। जैसे यदि हम हिन्दी साहित्य मे देखे तो इसके विभिन्न कालखंडों की चेतना बदलती रही है। अलग-अलग रही है। इस बदलाव का जो कारक है वही चेतना है।

कुछ विद्वानों ने सामाजिक चेतना का वर्गीकरण भी किया है जो निम्न है-

वैयक्तिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना, राजनीतिक चेतना, मानवीय चेतना, दलित चेतना, आर्थिक चेतना, स्त्री चेतना, धार्मिक चेतना इत्यादि।

सामाजिक चेतना सामूहिकता का बोध कराती है। जो समाज के सर्वांगीण विकास की बात करता है और उसकी लोक वेदना जितनी गहरी होगी उसकी सामाजिकता व सामाजिक चेतना उतनी ही तीव्र व गहरी होगी। और उसमें संवेदना का घनत्व उतना ही गहरा होगा। इस बात को हम इस प्रकार से समझ सकते हैं कि जो सामाजिक सुधार या हक अधिकार वंचितों की लड़ाई लड़ी हैं। उसमें वही लोग उसके नेतृत्व कर्ता हुए हैं जो उस पीड़ा से गुजर चुके हैं। इसको हम सरलता के लिए गांधी व अंबेडकर को देख सकते हैं कि उन्होंने समाज व व्यक्तियों के लिए हमेशा से संघर्ष किया। क्योंकि उनकी चेतना गरीब मजदूर शोषितों तक पहुंची। और वहीं दूसरी और हमारे पूजीपति वर्ग है जो विश्व के धनाढ्य में अपना उच्च स्थान रखता है। और उसी के सामने एक गरीब लाचार नंगा पीड़ित भारत भी निवास करता है। लेकिन उन सब से उनको कोई लेना देना नहीं है। और ना ही वह उसके लिए आवाज उठाएंगे न किसी प्रकार की अन्य योजनाएं लाएंगे। क्योंकि उनकी सामाजिक चेतना इस ओर नहीं उन्मुख है। बल्कि उनकी चेतना उस ओर उन्मुख है जहा से इनका शोषण कर

सके। जिसे हम सामाजिक चेतना नहीं बल्कि व्यक्ति चेतना कह सकते हैं। एक बात और कि सामाजिक चेतना सामाजिकरण का काम भी करती है वह अपने साथ पक्ष-विपक्ष दोनों का स्पेस बनाकर रखती है। वह सबके हित में कार्य करता है। और एक प्लेटफार्म का निर्माण करती है। गांधीजी चरखे पर सूत काटते वक्त सोचते हैं। "मैं जितनी बार सूत निकालता हूं, उतनी ही बार भारत की गरीबी का विचार करता हूं। भूख की पीड़ा से व्यक्ति और पेट भरने के सिवा और कोई इच्छा रखने वाला मनुष्य के लिए उसका पेट ही ईश्वर है।"1 यह जो दूसरों की वेदना को दूसरे की पीड़ा को दूसरे के अभाव को दूसरे के संघर्ष को जो समझने की क्षमता है वह सामाजिक चेतना है तभी हम उसके दर्द को महसूस कर पा रहे हैं। यह जो भाव है जो हमें बिना किसी रोक टोक भेद भाव बिना किसी लाग लपेट के एक दूसरे से जोड़ता है वह सामाजिक चेतना हैं।

इसी तरह से कबीर के यहां भी इसकी तीव्र अनुभूति है। वह भी मनुष्य-मनुष्य के बीच कोई भेद नहीं पाते बल्कि समानता ही पाते हैं। वह समानता दुख दर्द व उसकी वंचनाओं की समानता है। उसके मनुष्य होने की समानता है। यह चिंता व चेतना है। साहित्य में ही यदि आगे यदि देखें तो भारतेंदु हरिश्चंद्र प्रेम चंद इत्यादि सामाजिक चेतना के सशक्त साहित्यकार हुए। यदि हम कबीर को टैग करें तो उनका भाव है कबीरा सोई पीर है जो जाने पर पीर। इसका जो भाव है वह सामाजिक चेतना का संदेश है। जो जितना संघर्षशील है वह उतना ही अधिक सामाजिक चेतना से अभिप्रेरित है। इस प्रकार यदि हम देखे तो सामाजिक चेतना में व्यापक जन कल्याण की एक पवित्र भावना निवास करती है। यही चेतना उसे समाज कल्याण सामाजिक कार्यों की ओर अभिप्रेरित करती है।

हिन्दी उपन्यास का विकास

किसी भी विधा का जन्म परिवेश व परिस्थितियों के दबाव से होता है। जब परिवेश का दबाव बढ़ता है, और अभिव्यक्ति के माध्यमों की क्षमता कम पड़ती है। तब उस दबाव व परिवेश को व्यक्त करने के लिए एक नई विधा की आवश्यकता होता है, जो उस परिवेश व उसके दबाव को सरलता व सहजता से अभिव्यक्त कर सके व उसके रूप व व्यापकता को धारण कर सकें। उपन्यास का भी जन्म कुछ इसी प्रकार के दबावों के बीच हुआ। जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सास्कृतिक चेतना व जीवन मूल्य, आडंबर, विसंगतियों, अनाचार-अत्याचार, भष्ट्राचार, अनैतिकता, पारिवारिक विसंगतियां ग्रामीण व क्षेत्रीय समस्याओं इत्यादि को व्यक्त कर सके और उसे धारण कर उसे व्याख्यायित कर सके। जीवन के विस्तार को अपने अंदर समेट सके, उसके उतार-चढ़ाव

की समेत सकें। और हिन्दी उपन्यास का उदय जिस परिवेश में होता है संयोग से कई प्रकार के नई चीजों व विचारों के उदय का समय भी है, जिसके कई रूप हैं। जिसमें प्रमुख रूप से राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन, नवजागरण काल, धार्मिक सुधार, सामाजिक सुधार(ब्रह्म समाज आर्य समाज थियोसोफिकल सोसायटी प्रार्थना समाज), प्रेस का आविष्कार, संपर्क के साधनों का विस्तार, नई विचार चेतना का उदय व वैश्विक स्तर पर अलग-अलग सभ्यता व संस्कृत का परस्पर मिलन। इस प्रकार बहुत सारी नई परिस्थितियां उत्पन्न हुई जिससे एक व्यापक व विस्तृत विधा की मांग हुई जो इन सारी परिस्थितियों को अपने अंदर समेट सके और उसे परिभाषित कर सके। उपन्यास इन सब बातों का वाहन बखूबी कर रहा है। क्योंकि वह इसके सर्वथा उपर्युक्त था। आज वह मानव जीवन के खुरदरेपन को समाज के समता विषमता को व समय के यथार्थ परिस्थितियों के सभी पहलुओं को अपने भीतर समेट लिया है। और वह आज जीवन की महाकाव्यात्मक अभिव्यक्ति बन गया है।

हिंदी साहित्य की अपेक्षा उपन्यास विधा के लेखन की शुरुआत पश्चात में बहुत पहले हो चुकी थी। और भारतीय भाषाओं में बंगला में भी इसका शुभारंभ हो चुका था । पर हिंदी साहित्य अभी इस विधा व इसके जान पहचान से अपरिचित था। परंतु जब बंगला साहित्य से हिंदी साहित्यकारों का परिचय होता है और उन्हें उपन्यास जैसी विधा से ज्ञान होता है। और उसके स्वरूप महत्त्व और कथावस्तु से प्रभावित होते हैं, तो उन्होंने इसका अनुवाद हिन्दी में करना शुरू करते हैं। यह भी एक प्रकार का नवजागरण हैं। जो बंगलासाहित्य के माध्यम से हिंदी साहित्य मे आता है। वैसे भी यह नवजागरण का कालखंड है। और उसका विस्तार हो रहा है। इस दृष्टि से हिंदी साहित्य में उपन्यास विधा के रूप में एक नवजागरण की शुरुआत होती है। जो आज हिंदी साहित्य में सर्वाधिक चर्चित व लोकप्रिय विधा के रूप में उपन्यास को मान्यता मिल चुकी है। इसका लेखन भी काफी तीव्रता से हो रहा है। दिन पर दिन अपने लिए नए विषयों का चयन कर रहा है। जिससे उसका विस्तार अत्यंत व्यापक हो गया चुका है। और इसके लेखन की कई शैलियाँ भी विकसित हो चुकी हैं। इसके साथ-साथ इसके विषय में भी बड़ी जटिलता है आ चुकी है। इन्हीं सब व्यापकता और इसकी जरूरतों को ध्यान में रखकर विद्वानों ने इसको परिभाषित किया है। कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नलिखित हैं-

डॉ.श्यामसुंदर दास के अनुसार- "मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा को उपन्यास कहते हैं।"2

कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद्र के अनुसार- "मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूं। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्य को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है। चरित्र समानता और विभिन्नता विभिन्नता और विभिन्नता और विभिन्न में अभिनव दिखाना उपन्यास का मुख्य कर्तव्य है।"3

बाबू गुलाब राय के अनुसार - "उपन्यास कार्य कारण श्रृंखला में बंधा हुआ वह गद्य कथानक है। जिसमें अपेक्षाकृत तथा पे जिंदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है।"4

भगवतशरण उपाध्याय के अनुसार - "साहित्य के अन्य अंगों के समान उपन्यास को जीवन का दर्पण मानते हैं कहानी का विस्तार उसमें प्रवाह मान जीवन को प्रकट करता है।"5

नलिन विलोचन शर्मा के अनुसार - "हिंदी उपन्यास का इतिहास किसी भी देश के उपन्यास के इतिहास की तरह किसी भाषा क्षेत्र की सभ्यता और संस्कृत के नवीन रूप के विकास का साहित्यिक प्रति फलन है।"6

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- "उपन्यास में मनोरंजन के लिखी जाने वाली कविताओं को ही नहीं नाटकों की भी कमर तोड़ दी है। क्योंकि पाँच मील दौड़ कर रंगशाला में जाने की अपेक्षा पाँच मील से पुस्तक मंगा लेना आज के जमाने में सरल है।"7

नंददुलारे वाजपेई के अनुसार- "उपन्यास को आधुनिक युग का महाकाव्य कहा है। यह केवल इतना कह देना पर्याप्त होगा कि उपन्यास में पहली बार सामान्य मध्य वृत्त परिवार और उसका परिवेश उभर आया है। सैकड़ों वर्ष से दिन ही उपेक्षित सामान्य लोगों की भावनाओं को उपन्यास में सर्वप्रथम वाणी प्रदान की है।"8

मैनेजर पाण्डेय के अनुसार- "उपन्यास केवल यथार्थ की खोज और उसकी गति का पहचान का आख्यान ही नहीं है, वह संभावनाओं की तलाश का आख्यान भी है। उसमें वर्तमान की सीमाओं के बोध के पार जाने की आकांक्षा के कारण संभावित संसार की रचना की कोशिश भी होती है।"9

उपर्युक्त परिभाषाओं का यदि विश्लेषण करें तो स्पष्ट है कि उपन्यास मानव जीवन के यथार्थ व कल्पना का एक मिलाजुला रूप होता है। जो मानव जीवन को चरितार्थ करता हुआ करुणा दया

धर्म शोक पाप पुण्य जैसे मानवीय गुणों की सृष्टि करता हुआ मानव कल्याण के साथ उसकी भावना का विस्तार करता है। जीवन को स्पन्दित करते हुए एक आदर्श का निर्माण करता है। और जीवन की जटिलताओं समस्याओं की गुत्थियों को खोलते हुए एक नया मार्ग प्रशस्ति करता हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने टिप्पणी करते हुए लिखा है कि- "वर्तमान जगत में उपन्यासों की बड़ी शक्ति हैं। समाज जो रूप पकड़ रहा है उसके भिन्न-भिन्न वर्गों में जो प्रवृत्तियां उत्पन्न हो रही हैं, उपन्यास उनका विस्तृत प्रत्यक्षीकरण ही नहीं करते, आवश्यकतानुसार उनके ठीक विन्यास, सुधार अथवा निराकरण की प्रवृत्ति भी उत्पन्न कर सकते हैं। समाज के बीच खानपान के व्यवहार तक में जो भद्दी नकल होने लगी है ।गर्मी के दिनों में भी सूट बूट कसकर टेबुलों पर जो प्रीतिभोज होने लगे हैं- उसको हंसकर उड़ाने की सामर्थ उपन्यासों में ही है। लोक या किसी जन समाज के बीच काल की गति के अनुसार जो गुण और चिंत्य परिस्थितियां खड़ी होती रहती हैं। उनको गोचर रूप में सामने लाना और कभी-कभी निस्तार का मार्ग भी प्रत्यक्ष करना उपन्यासों का काम है।"10 आज उपन्यास इससे कई कदम आगे बढ़कर अपने आप को और अधिक विस्तारित करते हुए सामाजिक जिम्मेदारियों को और अधिक वाहन किया है।

हिंदी उपन्यास के विकास को समझने के लिए हम इसे खंडों या वर्गों में विभाजित कर आसानी से समझ सकते हैं। उपन्यासों का लेखन तो भारतेंदु युग से ही शुरू हो जाता हैं पर इस विधा का वर्गीकरण कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद्र को आधार बनाकर कालगत किया गया है पर साहित्यिक विशेषताओं या विषय गत विशेषताओं के आधार पर भी वर्गीकरण किया गया है जैसे सामाजिक उपन्यास ऐतिहासिक उपन्यास जासूसी आदि। यहां से हिंदी उपन्यास के विकास की यात्रा शुरू होती है जिसका संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार से हैं-

प्रेमचंद पूर्व हिंदी उपन्यास

प्रेमचंद युगीन हिंदी उपन्यास

प्रेमचन्दोत्तर हिंदी उपन्यास

इस विभाजन को हम मोटे तौर से सही मान सकते हैं। पर ध्यान से देखे तो यह विभाजन आज थोड़े से परिवर्तन या बदलाव की मांग कर रहा है। वह भी प्रेमचन्दोत्तर हिंदी उपन्यास का कालखंड में। क्योंकि यह विभाजन जिस समय किया गया होगा वह समय प्रेमचंद के आसपास या उनके

थोड़े से समय के बाद का या आसपास का समय हो सकता है। क्योंकि प्रेमचंद्र के समय तक के दोनों खंड जो विशेष परिवर्तनों को इंगित करते। तो प्रेमचन्दोत्तर काल खंड भी बड़े-बड़े परिवर्तनों व उलट फेर से गुजरा है। और उस परिवर्तनों की दशाएं और दिशाएं अलग है। उससे उपजे या उससे निर्मित उपन्यास की कथावस्तु भी अलग हैं। और उस कालखंड में एक व्यापक बदलाव आया है। और उसके दो भाग 1936 ई. के बाद से स्वतंत्रता पूर्व तक का समय और और दूसरा स्वतंत्रता के बाद का समय। यहां पर एक परिवर्तन की गुंजाइश है। क्योंकि यदि हम देखे तो 36 के बाद भी कहानी, कविता जैसी विधाओं में बहुत से आंदोलन चले। जो विभिन्न परिवर्तनो व विचारों के आंदोलन थे। तो एक विधा के रूप में उपन्यास उस परिवर्तन से अछूता तो नहीं है। और इसमें एक क्रमिक विकास जो दिखता है वह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रेमचंद के या प्रेमचंद तक का उपन्यास सामाजिक सरोकारों, सामाजिक समस्याओं, किसान, मजदूर, दलित, अगड़ा-पिछड़ा, समाज सुधार, धर्मनीति इत्यादि तक रहा होगा। पर बाद में इसमें व्यापक मात्रा में पौराणिक पुनराव्याख्यान, इतिहास की नई व्याख्या, विभाजन, महापुरुषों का जीवन वृत्त, संघर्ष, साहित्य के महाकाव्यों पर लेखन, स्त्री, किन्नर, क्षेत्रीयता, विस्थापन, आदिवासी, जल-जंगल व जमीन, शिक्षा, स्वास्थ्य, राजनीति, भ्रष्टाचार, अनाचार, अत्याचार, मनोविज्ञान, दंपति जीवन, महानगरी जीवनबोध, परंपरा और आधुनिकताबोध, शिक्षण संस्थाओं में अनाचार भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, हिंदू-मुस्लिम, जाति, धर्म, ग्रामीण व शहरी इत्यादि विषयों पर गंभीर व व्यापक लेखन हो रहा है। जो इस कालखंड का इस आधार पर विश्लेषण कर सके। उसे सही रूप मे प्रस्तुत कर सके। उसका जिक्र यहां पर अवश्य होना चाहिए। इन सब अधरों पर भी हिन्दी उपन्यास को पुनर्गठित कर सके।

प्रेमचंद पूर्व हिंदी उपन्यास (1877-1918 ई.)

साहित्य की कोई भी विधा हो उसका जितनी बार अध्ययन व विश्लेषण किया जाएगा, वह उतनी बार एक नया अर्थ व संदर्भ आपको दे जाती है। इसलिए कोई भी लेखक कोई बात तुरंत पूर्ण रूप से नहीं करता बल्कि वह एक इशारा करता है। यह अपूर्णता एक नये अर्थ की अपूर्णता होती हैं। जिसमें उसकी तात्कालिकता के साथ-साथ भविष्य भी छुपा हुआ होता हैं। किसी भी रचना की यह अपूर्णता ही उसकी जीवंतता तथा उसके व्यापक क्षेत्र का विस्तार करती है। प्रेमचंद पूर्व हिंदी उपन्यास साहित्य का समय 1887 ई. से 1918 ई.सन तक मान्य किया गया है। यह कालखंड प्रथम उपन्यास के निर्धारण का भी कालखंड हैं। प्रथम उपन्यास को लेकर तरह तरह की अटकलें भी खूब रही व अलग-अलग विद्वानों ने अलग-अलग उपन्यास को प्रथम उपन्यास के रूप में माना है। यह

विवाद कई स्तरों पर है। यह कहीं प्रथम मौलिक उपन्यास को लेकर तो कहीं पश्चात ढंग या शैली का प्रथम उपन्यास को लेकर। परंतु एकमत होकर तो नहीं पर ज्यादातर विद्वानों ने प्रथम उपन्यास के रूप में भाग्यवती व परीक्षा गुरु को लेकर विवाद करते हैं। और इन्हीं में से किसी एक को प्रथम मान भी लेते हैं। जैसा कि अलग-अलग विद्वानों ने प्रथम उपन्यास के रूप में निम्न उपन्यासों को मान्यता दी है।

डॉ.गोपालराय देवरानी जेठानी की कहानी 1970 पंडित गौरीदत्त के उपन्यास को प्रथम उपन्यास माना है।

डॉ विजय शंकर मल्ल ने श्रद्धा राम फुल्लौरी के भाग्यवती को माना ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने श्रीनिवास दास के परीक्षा गुरु को और उन्होंने कहा कि अंग्रेजी के ढंग का यह हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास है।

इस कालखंड के संबंधित हिंदी लेखकों का लेखन संस्कार अंग्रेजी के नॉवेल, बंगला के उपन्यास, संस्कृत की कथा आख्यायिका तथा हिंदी की मध्ययुगीन प्रेम कहानियों के सम्मिलित प्रभाव से निर्मित तिलिस्म ऐयारी कोटी का था। परंतु आज हिंदी उपन्यास इस पृष्ठभूमि से मुक्त होकर जीवन के यथार्थ धरातल पर आ पहुंचा है। इस कालखंड के प्रमुख उपन्यास व उपन्यासकार निम्नलिखित है-

इस कालखंड के प्रमुख उपन्यासकारों में श्री किशोरी लाल गोस्वामी है। जो सामाजिक, ऐतिहासिक तथा घटनात्मक तीनों प्रारूपों में उपन्यास लिखें। पर इस समय तक हमारी साहित्यिक चेतना मूलतः दो प्रवृत्तियों से परिचालित थी एक मनोरंजन प्रधान प्रवृति थी और दूसरी सामाजिक जागरण की। मनोरंजन प्रधान उपन्यासों में ऐयारी तिलिस्म जासूसी कोटि के उपन्यास आते हैं तो, सामाजिक सुधार के अंतर्गत उपदेश प्रधान व सुधारवादी उपन्यास आते हैं। यह वर्गीकरण व विश्लेषण प्रारंभिक दिनों का है। बाद में जब और अधिक अध्ययन विश्लेषण हुआ तो सुविधा व तार्किक दृष्टि से किशोरी लाल गोस्वामी को आधार बनाकर इसके तीन ही प्रारूपों को मान्यता दी गई जिसमें सामाजिक, ऐतिहासिक एवं घटनात्मक उपन्यास है। इन तीनों प्रारूपों की बहुत ही संक्षिप्त व सार रूप में यहां पर चर्चा हैं जो निम्नलिखित है।

सामाजिक उपन्यास व उपन्यासकार

सामाजिक उपन्यासकारों की श्रेणी में पंडित श्रद्धाराम फिल्लौरी का भाग्यवती, लाला श्रीनिवास दास का परीक्षा गुरु, श्री बालकृष्ण भट्ट का रहस्य कथा, नूतन ब्रह्मचारी, सौ अनाज एक सुजान, ठाकुर जगमोहन सिंह श्यामा स्वप्न, राधाकृष्णदास का निस्सहाय हिन्दू, लज्जाराम मेहता धूर्त रसिकलाल, आदर्श दंपत्ति, स्वतंत्रता रमा परतंत्र लक्ष्मी, श्री किशोरीलाल गोस्वामी जो कि इस कालखंड के सबसे महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं। इनके उपन्यासों में त्रिवेणी, लीलावती/आदर्श सती पुनर्जन्म/सौतिया दाह, श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय का ठेठ हिंदी का ठाठ (देवबाला) तथा अधिखिला फूल इत्यादि। इन सभी उपन्यासों में तात्कालिक सामाजिक प्रवृत्तियों, धर्मआदर्श, नवीनता का समर्थन या विरोध अंधविश्वासों का परित्याग, सतीत्व की महिमा, ईश्वरीय न्याय में विश्वास इत्यादि का चित्रण किया गया है। तथा इनका लक्ष्य समाज की कुरीतियों को सामने लाकर उनका विरोध करना और आदर्श परिवार और समाज की रचना का संदेश देना था।

ऐतिहासिक उपन्यास व उपन्यासकार

सामाजिक उपन्यास व की तुलना में ऐतिहासिक उपन्यास बहुत ही कम मात्रा में लिखें। बंकिम के ऐतिहासिक उपन्यासों का अनुवाद भी खूब हुआ है। इस श्रेणी के उपन्यासकारों में किशोरीलाल गोस्वामी का सुल्ताना रजिया बेगम, कानन कुसुम, आदर्श बाला, लवंग लता, जयराम दास गुप्ता का कश्मीर पतन, रंग में भंग, कलावती, बृजनंदन सहाय का लाल चीन इत्यादि प्रमुख हैं। ये उपन्यास ऐतिहासिक जरूर माने गए हैं पर सच्चे अर्थों में इनमें ऐतिहासिकता न के बराबर है। पर ऐतिहासिकता के तत्व जरूर हैं, इन्हीं अर्थों में यह ऐतिहासिक है। बाकी लेखकों की प्रवृत्ति इतिहास की ओर से हटकर प्रणय कथाओं, विलास लीलाओं, रहस्यमय प्रसंगो तथा कुतूहल वर्धक घटनाओं की कल्पना में दोलायमान हो रही है।

घटनात्मक उपन्यास व उपन्यासकार

इस श्रेणी के अंतर्गत तिलस्म ऐयारी उपन्यासों को रखा गया है। इस धारा के प्रवर्तक बाबू देवकीनंदन खत्री है। चंद्रकांता, चंद्रकांता संतति, नरेंद्र मोहिनी, वीरेंद्र वीर, कुसुम कुमारी इनके प्रसिद्ध तिलिस्म ऐयारी उपन्यास है। हरे कृष्ण जौहर कृति कुसुमलता भी उल्लेखनीय है। तिलिस्म ऐयारी उपन्यास सामान्य जनता में खूब लोकप्रिय हुए थे। गोपाल राम गहमरी जासूसी उपन्यासकार है। सर कटी लाश, अद्भुत लाश, गुप्तचर उल्लेखनीय उपन्यास है। गहमरी जी ने लगभग दो सौ जासूसी उपन्यास लिखें। इन सबके उपरांत भी इस पूरे कालखंड में सर्वाधिक चर्चित ख्याति प्राप्त उपन्यास चंद्रकांता

है। जिसके बारे में कहा जाता है कि इसको पढ़ने के लिए बहुत से लोगों ने हिंदी सीखें। इसीलिए इस उपन्यास को पाठक पैदा करने वाला उपन्यास भी कहा जाता है।

उपर्युक्त उपन्यासों में सबसे महत्वपूर्ण व सशक्त धारा सामाजिक उपन्यासों की है। जिनका श्री गणेश परीक्षा गुरु से हुआ था। अन्य उपन्यासों का महत्व इतना ही है कि उनसे सामान्य जनता में हिंदी की लोकप्रियता बढ़ी। इस युग के सर्वप्रथम उपन्यास लेखक किशोरी लाल गोस्वामी माने गए। गोस्वामी जी ने मानवीय प्रेम के विविध पक्षों का उद्‌घाटन में ही अपनी शक्ति का अपव्यय किया है। वस्तुतः जीवन के यथार्थ को कला में डालने वाले उपन्यासों की रचना का वातावरण अभी नहीं बन पाया था। इसका आरंभ आगे चलकर द्विवेदी युग में हुआ। प्रेमचंद्र अपने पूर्व के उपन्यासों के विषय में टिप्पणी करते हुए लिखते है कि "मगर आजकल कुकर्म हत्या चोरी डाके से भरे कुछ उपन्यासों की जैसी बाढ़ सी आ गई है। साहित्य के इतिहास में ऐसा कोई समय न था जब ऐसे कुरुचि पूर्ण उपन्यासों की इतनी भरमार रही हो।"11 और किसी क्रम में तिलिस्म ऐयारी पर तंज कसते हुए लिखते हैं कि "जिन्हें जगत गति नहीं व्याप्ति वे जासूसी तिलिस्मी चीजें लिखा करते हैं।"12

प्रेमचंद युग (1918-1936 ई.)

हिंदी उपन्यास व पूरे साहित्य के विकास क्रम में यदि इस कालखंड को देखे तो यह सबसे उन्नत कालखंड है। गद्‌य में यदि प्रेमचंद जैसा विराट व्याक्तित्व विराजमान हैं, तो काव्य में छायावाद का पूरा वैभव विराजमान है। आलोचना निबंध के साथ-साथ आचार्य शुक्ल का हिंदी साहित्य का इतिहास भी इसी कालखंड में आता है। इस प्रकार से यह समय एक समृद्‌ध कालखंड का समय है और इसे नवजागरण का युग भी कहा जाता है। राजनीतिक दृष्टि से भी यह खंड गांधी युग है। जिसमें बापू अपने सत्य के प्रयोग के साथ न्याय की लड़ाई लड़ रहे हैं। इन सब परिवेश से मुंशी प्रेमचंद्र के साहित्य का निर्माण होता है। जो भ्रष्टाचार, शोषण, किसान, मजदूर, महाजनी सभ्यता, छुआछूत, जाति, धर्म, राष्ट्र, सभ्यता-संस्कृति जैसे मानवीय समस्याओं को पहचाना और उसे अपनी विषयवस्तु बनाते हैं। प्रेमचंद्र पर उस समय के बड़े नेता व समाज सुधारक आन्दोलनों का भी बड़ा प्रभाव पड़ा। जिससे वे साहित्य में करुणा, दया, धर्म, सहानुभूति, भाईचारा, एकता, सौहार्द जैसे मानवीय मूल्यों को आधार बनाकर साहित्य सेवा में रत होते हैं। 'साहित्य में जीवन का स्थान' निबंध में उन्होंने लिखा है कि- "आदिकाल से मनुष्य के लिए सबसे समीप मनुष्य है। हम जिसके

सुख-दुख हंसने-रोने का मर्म समझ सकते हैं, उसी से हमारी आत्मा का अधिक मेल होता है। हमारी मानवता जैसे विशाल और विराट होकर समस्त मानव जाति पर अधिकार पा जाती है।"13 यह जो बार-बार मानवता वह मनुष्यता की बात प्रेमचंद करते हैं वह अनायास नहीं है। वह बहुत बड़े चिंतक और मानवता के पुजारी की चिंता हैं। और यहीं से हिंदी उपन्यास में मानवीय दृष्टि का विस्तार होता है। और हिंदी उपन्यास का सच्चे अर्थों में विकास होता है। इन्हीं सब को देखते हुए उन्हें कथा सम्राट भी कहा गया है। मानवता मनुष्य व समाज ही इनके लेखन के केंद्र बिंदु में रहा है। कुछ इसी प्रकार का विचार हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध साहित्य ही मनुष्य का लक्ष्य में लिखा है कि "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति हीनता और परमुखापेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजद्दीप्त ना बना सके, जो उसके हृदय को परदुखकातर और संवेदनशील ना बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।" 14 प्रेमचंद्र युग के प्रमुख उपन्यासकार व उपन्यास निम्नलिखित है-

सेवासदन का प्रकाशन 1918 ई.सन न केवल प्रेमचंद के साहित्य जीवन की वरन् हिंदी उपन्यास की भी एक महत्वपूर्ण घटना थी। सेवासदन पूर्ववर्ती कथा साहित्य का अभूतपूर्व विकास था। इससे पहले कथा साहित्य में या तो अजीबोगरीब घटनाओं के द्वारा कुतूहल और चमत्कार की सृष्टि रहती थी। अथवा आर्य समाज और तत्समान अन्य सामाजिक आंदोलनों से प्रभावित समाज-सुधारों का ही प्रचार ही उसकी उपलब्धि रह गई थी। जीवन की सही अभिव्यक्ति का साधन वह नहीं बन पाया था। देवकीनंदन खत्री, गोपालराम गहमरी, हरीकृष्ण जौहर, आदि पहली कोटि के कथाकार थे तो गौरीदत्त, श्रद्धा राम फिल्लौरी, श्रीनिवास दास, बालकृष्ण भट्ट, लज्जा राम मेहता, बृज नंदन सहाय आदि दूसरी कोटि के कथाकार थे। किशोरी लाल गोस्वामी की स्थिति कुछ-कुछ बीच की थी यद्यपि उनका झुकाव भी मनोरंजन की ओर ही अधिक था। मुन्शी जी ने मनोरंजन और प्रचार से ऊपर उठकर उपन्यास को जीवन की अभिव्यक्ति के साधन के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। वैसे प्रेमचंद्र ने भी 1918 के पूर्व उर्दू में कई उपन्यासों की रचना की थी, जिनमें से प्रेमा अर्थात दो सखियों का विवाह, (हमखुर्मा व हमसवाब का रूपांतरण) 1907 ई. सन में हिंदी में प्रकाशित हो चुका था। इनके अन्य प्रारंभिक उपन्यास असरारे मआविद उर्फ देवस्थान रहस्य, रूठी रानी जलवए ईसार आदि। इनमें प्रेमचंद्र ने भी उपन्यास को मनोरंजन से ऊपर उठाकर जीवन के सीधे संपर्क में लाने का प्रयत्न किया था। उन्होंने आर्य समाज से प्रेरणा अवश्य ग्रहण की थी, पर उनकी अपनी विशिष्ट जीवन दृष्टि भी निर्मित हो चुकी थीं। जो इन उपन्यासों में अभिव्यक्ति पाना चाह रही थी। किंतु

हिंदी में उपन्यास की कोई परंपरा ना होने के कारण प्रेमचंद्र को उसका समुचित ढांचा नहीं मिल पा रहा था। इसी की तलाश सेवासदन है। जो उनकी पहली प्रौढ़ कृति है। जहां से उनके नये औपन्यासिक जीवन का ही नहीं, बल्कि हिंदी उपन्यास के एक नए युग का भी प्रादुर्भाव हुआ।

सेवासदन के बाद प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, निर्मला, गबन, कर्मभूमि, गोदान मौलिक उपन्यास प्रकाशित हुए। प्रेमचंद अपने उपन्यास पहले उर्दू में लिखते थे। फिर स्वयं उसका रूपांतरण हिंदी में करते थे। सेवासदन, प्रेमाश्रम और रंगभूमि क्रमशः बाजारे हुस्न गोशए-आफियत और चौगाने हस्ती नाम से उर्दू में लिखे गए थे। किंतु प्रकाशित पहले हिंदी में हुए वैसे मूल रूप से हिंदी में लिखित उनका पहला उपन्यास कायाकल्प है। इसके बाद उन्होंने सभी उपन्यासों की रचना हिंदी में ही की, उर्दू की बैसाखी की जरूरत उन्हें अब नहीं रह गई थी। हिंदी उपन्यास को प्रेमचंद की देन अनेक मुखी है। प्रथमतः उन्होंने हिंदी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया। चारों ओर फैले हुए जीवन और अनेक सामायिक समस्याओं पराधीनता, जमीदारी, पूंजीपतियों और सरकारी कर्मचारियों द्वारा किसानों का शोषण, निर्धनता, अशिक्षा अंधविश्वास, दहेज की कुप्रथा घर और समाज में नारी की स्थिति वेश्याओं की जिंदगी वृद्धि विवाह विवाह समस्या सांप्रदायिक वैमनस्य अस्पृश्यता मध्यवर्ग की कुंठा है आदि ने उन्हें उपन्यास लेखन के लिए प्रेरित किया था। प्रेमचंद्र ने एक एक कर बड़ी बेसब्री से इन समस्याओं और जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपने उपन्यास में स्थान दिया। सेवा सदन में उनका ध्यान मुख्यतः विवाह से जुड़ी समस्याओं तिलक दहेज की प्रथा कुलीनता का प्रश्न विवाह के बाद घर में पत्नी का स्थान और समाज में वेश्याओं की स्थिति पर रहा। निर्मला में दहेज प्रथा वृद्धि विवाह से होने वाले पारिवारिक विघटन तथा विनाश का चित्रण है। कृषक जीवन की समस्याओं का प्रथम प्रयास प्रेमाश्रम में लक्षित हुआ और उसे पूर्णता प्राप्त हुई गोदान में रंगभूमि कर्मभूमि में ग्रामीणों की स्थिति का वेवाक चित्रण है, तो गोदान को ग्रामीण जीवन और संस्कृति का महाकाव्य कहा जा सकता है। ग्रामीण जीवन का इतना सच्चा व्यापक और प्रभावशाली चित्रण हिंदी के किसी अन्य उपन्यास में नहीं हुआ है। संभवत व संसार के साहित्य में भी जोड़ है।

विशंभरनाथ शर्मा कौशिक ने मां और भिखारी लिखकर प्रेमचंद का सफल अनुसरण किया था। चतुरसेन शास्त्री ने आलोच्य अवधि में हृदय की परख, हृदय की प्यास, अमर अभिलाषा, आत्मदाह इत्यादि उपन्यासों की रचना की। प्रताप नारायण श्रीवास्तव के विदा और विजय आदर्शवादी उपन्यास है। शिवपूजन सहाय का 'देहाती दुनिया' उपन्यास प्रचलित रुग्णता को तोड़ने की दिशा में एक

साहसिक कदम था। पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' चंद्र हसीनों के खतूत, दिल्ली का दलाल, बुधवा की बेटी, शराबी आदि उपन्यासों में समाज की बुराइयों को उसकी नंगी सच्चाई को बिना किसी लाग लपेट के बड़े ही साहस के साथ किंतु सपाट बयानी के रूप में प्रस्तुत किया है। ऋषभ चरण जैन के उपन्यासों में भारतीय तत्कालीन समाज के वर्जित विषयों पर दिल्ली का कलंक, दिल्ली का व्यभिचार, वेश्यापुत्र रहस्यमयी आदि उपन्यासों की रचना की। प्रेमचंद के समकालीनों में जयशंकर प्रसाद इसलिए उल्लेखनीय है कि वे न केवल कविता और नाटक के क्षेत्र में वरन कंकाल और तितली की रचना कर उपन्यासकार के रूप में भी स्वयं को साबित किया। और इन्हीं के साथ प्रेमचंद्र युग में ही एक नई दिशा देने का सफल प्रयास जैनेंद्र ने किया परख, सुनीता, त्यागपत्र समकालीन सामाजिक उपन्यासों की परंपरा से अलग लीक पर चलने का प्रयास किया गया है। भगवतीचरण वर्मा का चित्रलेखा पाठकों के बीच पर्याप्त लोकप्रिय रहा। राधिका रमण प्रसाद सिंह का राम रहीम सामाजिक पहलुओं का उद्‌घाटन किया, पर उसका लगभग सारा ध्यान भाषा के चुलबुलाहट से युक्त बनाने में ही लगा रहा। सियारामशरण गुप्त का गोद, अंतिम आकांक्षा और नारी गाँधी दर्शन पर आधारित मनोवैज्ञानिक सामाजिक उपन्यास है। भगवती प्रसाद वाजपेई के उपन्यासों में प्रेमपत्र, मीठी चुटकी, अनाथ पत्नी, त्यागमयी, लालिमा आदि में मध्यवर्गीय पारिवारिक सामाजिक जीवन का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण मिलता है। वृंदावनलाल वर्मा कृत गढ़कुंडार और विराटा की पद्‌मिनी की रचना ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में हुई है। राहुल सांकृत्यायन ने इस काल में मौलिक उपन्यासों के स्थान पर शैतान की आंख, विस्मृति के गर्भ में, सोने की ढाल आदि अनुदित उपन्यासों की रचना की। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने अप्सरा, अलका, प्रभावती और निरुपमा आदि है। किंतु इनके उल्लेख के बिना इस काल के उपन्यास साहित्य का विश्लेषण अधूरा रहेगा।

इस कालखंड को हिंदी उपन्यास का स्थापना काल कह सकते हैं। जहां प्रेमचंद्र ने हिंदी उपन्यास को प्रथम बार साहित्य का दर्जा प्रदान किया वहीं जैनेंद्र ने उसे आधुनिक बनाया तो प्रसाद, कौशिक, उग्र भगवती चरण वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेई, निराला आदि ने भी अपने-अपने ढंग से उसे समृद्‌धि प्रदान कर परवर्ती उपन्यासकारों का मार्गदर्शन किया।

प्रेमचन्दोत्तर हिंदी उपन्यास

हिंदी उपन्यास को यदि वर्गीकरण की दृष्टि से देखें तो यह कालखंड सबसे बड़े उतार-चढ़ाव परिवर्तनो विविधता वाला विमर्शो वाला संघर्षो वाला तथा नए-नए समस्याओं व कथ्य पर लिखा जाने वाला

सबसे बड़ा व विस्तृत कालखंड है। यह कालखंड समय के कई अंधेरे पृष्ठों को देखा है। मजबूरियां देखी है, अन्याय देखा हैं, और सब को बेनकाब किया है। हिंदी उपन्यास विधा कि यदि प्रेमचंद्र पूर्व में पृष्ठभूमि तैयार होती है। प्रेमचंद युग में उसमें गहराई आती है तो प्रेमचंदोत्तर कालखंड में वह अपने विस्तृत व व्यापक गहराई के साथ विस्तार को प्राप्त होता है। और यह विचारों की दृष्टि से देखें तो इसमें फ्रायड और मार्क्स की विचारधारा है तो प्रयोगात्मक विशेषताओं से भी युक्त हैं। आधुनिकतावादी विचारधारा के साथ उत्तर आधुनिकतावाद भी हावी है। प्रेमचंद ने प्रेमचंदोत्तर उपन्यासों के बारे में चर्चा करते हुए लिखते हैं कि "यों कहना चाहिए कि भावी उपन्यास जीवन चरित होगा। चाहे किसी बड़े आदमी का या छोटे आदमी का उसकी छोटाई-बड़ाई का। फैसला उन कठिनाइयों से किया जाएगा जिस पर उसने विजय पाई है। हां वह चरित्र इस ढंग से लिखा जाएगा कि उपन्यास मालूम हो। अभी हम झूठ को सच बना कर दिखाना चाहते हैं, भविष्य में सच को झूठ बना कर दिखाना होगा। किसी किसान का चरित्र हो या किसी देशभक्त का या किसी बड़े आदमी का पर उसका आधार यथार्थ पर होगा।"15

प्रेमचंदोत्तर उपन्यास में प्रगतिवादी, मार्क्सवादी, व्यक्तिवादी, मनोविश्लेषणवादी, समाजवादी, यथार्थवादी के साथ थोड़े ही अंतराल के बाद विभाजन वह विभाजन से उपजे विसंगतियों पर भी खूब लिखा गया। दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श के साथ विभिन्न विमर्शो पर व्यक्तिगत जीवनी पर सामाजिक जीवन पर सामाजिक समस्याओं पर ऐतिहासिक, राजनीतिक सब विषयों पर लगातार बड़े पैमाने पर लेखन अभी निरंतर चला ही आ रहा है। प्रेमचंद ने समाज के साथ व्यक्ति को एकीकृत होने का प्रश्न को अधिक महत्व दिया। वही उनके बाद व्यक्ति की गुम होती हुई पहचान को उभार कर सामने रखा। प्रेमचंद्र के उपन्यासों में अनमेल विवाह दहेज प्रथा जैसी समस्याए है। तो यहां पर विवाह स्वयं में एक समस्या है क्योंकि सारी अनिश्चितता है उसके बाद आरंभ होती है।

प्रेमचंदोत्तर काल खंड का कुछ समय परतंत्रता और गुलामी का समय है। जो व्यक्तिगत संघर्षो के साथ-साथ राष्ट्र के संघर्षों का समय है। और यह संघर्ष मुक्ति के संघर्ष के साथ अपने हक की लड़ाई भी लड़ रहा है। जो समय अनियंत्रित व अव्यवस्थित है। वह थोड़े समय के बाद संविधान द्वारा नियमित व नियंत्रित किया जाता है। हमें हमारे अधिकार व कर्तव्य मिलते हैं। समानता व स्वतंत्रता की बात कानूनी तौर पर हो गई व्यवहारिक भले ही ना हो। हक व अधिकार के कारण आदिवासी आज भी अपने प्राकृतिक संसाधनों जल जंगल जमीन को बचाने वह पाने के लिए संघर्षरत है। आजादी के बाद से बहुत सारी लड़ाइयां तेज हुई हैं बहुत सारी लड़ाईयों को कुचला भी

गया है। यहां पर वैश्विक व राष्ट्रीय स्तर पर बहुत कुछ बदला स्वार्थपरता इस हद तक बढ़ी कि 1939 से 1945 तक संपूर्ण विश्व को अपनी लपेट में लेकर ध्वंस लीला करने वाला महायुद्ध और राष्ट्रीय स्तर पर बहुत कुछ घटित होता रहा। जिसमें सबसे त्रासदी पूर्ण 15 अगस्त 1947 का समय था जिसमें एक संपूर्ण भारत राष्ट्र दो भागों में बांट जाता है। यह राष्ट्रीय स्तर पर बड़े उतार-चढ़ाव संघर्ष समस्याओं स्थापन विस्थापन खून खराबा लूट आगजनी का समय था। जिसने आम जनता की कोई सहमति व विचार नहीं था। था तो सिर्फ राजनीतिक स्वार्थ व शासन सत्ता का सुख। इससे ना किसी कौम का बहुत बड़ा विकास होने वाला था और ना ही और किसी बड़े पैमाने पर लाभ। क्योंकि विभाजन के इतने वर्षों बाद आज भी दोनों देश की स्थिति क्या है वह सामने है। न यहां की समस्याएं खत्म हुई ना वहां की गरीबी शोषण हत्या बलात्कार सब यहां भी हैं। और वहां भी बल्कि आज हम शरणार्थी उत्पीड़न जैसे नए वर्गों की उदय ही की है। जो आज भी सताए जा रहे हैं और न यहाँ के हो पा रहे न वहाँ के। और उनके नाम कानून बनाया जा रहा और राजनीतिक रोटिया पकाई जा रही हैं। यह स्थिति व विसंगतियां भारतीय इतिहास में एक काला पृष्ठ है जो समय-समय पर आज भी कही आतंकवाद कहीं उत्पीड़न कहीं सीमा उल्लंघन के नाम पर वह आज भी चल रहा है। इसके बाद जो स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं उसमें निराशा, कुंठा, दृष्टिहीनता, लक्ष्य हीनता, शून्यता, परमुखपेक्षित, आत्महीनता का वातावरण बना रहा। जिससे साहित्यकार प्रभावित होकर उसी से साहित्य निर्माण करते हैं। इसी सरलता से समझने के लिए हम इसे दो वर्गों में रख सकते हैं पहला स्वतंत्रता पूर्व का लिखा गया उपन्यास साहित्य और दूसरा स्वतंत्रता के पश्चात लिखा जा रहा उपन्यास साहित्य। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व की स्थितियां अलग थी जिन्हें स्पष्ट करते हुए रामचंद्र तिवारी ने लिखा है- स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले पूरे हिंदी को एकता के सूत्र में बांधने और उत्साह को एक निश्चित दिशा में प्रवाहित करने वाली मूल प्रेरणा थी- "ब्रिटिश साम्राज्यवाद से सतत संघर्ष की प्रवृत्ति। इसके साथ ही शोषण का विरोध निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति, सामाजिक एकता, नारी जागरण और अछूतोंद्दार, हिंदू मुस्लिम एकता आदि अन्य प्रेरणाए थी।"16

प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों में दो समानांतर पीढ़ियाँ एक साथ आती हैं। जिसमें प्रथम पीढ़ी के प्रमुख उपन्यासकार हैं। चतुरसेन शास्त्री, इलाचंद्र जोशी, उपेन्द्रनाथ अश्क, भगवतीचरण वर्मा, वृदावनलाल वर्मा, यशपाल, अज्ञेय, राहुल सांकृत्यायन, अमृतलाल नागर, हजारी प्रसाद द्विवेदी तो दूसरी पीढ़ी में उदय शंकर भट्ट, भीष्म साहनी, फणीश्वर नाथ रेणु, नागार्जुन, धर्मवीर भारती, राजेंद्र यादव, श्रीलाल

शुक्ल, शैलेश मटियानी, मारकंडेय, रामदरश मिश्र, निर्मल वर्मा, अमरकांत और कमलेश्वर इत्यादि इस दूसरी पीढ़ी के अन्तर्गत आने वाले प्रमुख उपन्यासकार हैं।

अज्ञेय कृत शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने अपने अजनबी प्रमुख उपन्यास है। इलाचंद्र जोशी कृत संन्यासी, पर्दे की रानी, प्रेत और छाया, निर्वासित मुक्तिपथ जिप्सी, जहाज का पंछी, ऋतु चक्र, भूत का भविष्य आदि प्रमुख हैं जो ग्रंथियों के मनोविश्लेषण पर आधारित हैं। उनकी भाव भूमिया एकांकी संकुचित और छोटी हैं। मुक्तिपथ और उसके बाद के उपन्यासों में परिदृश्य का विस्तार और सामाजिकता का समावेश दिखाई पड़ता है फिर भी वे कहीं भी मनोविश्लेषणात्मक प्रवृति व छायावादी संस्कारों से उबर नहीं पाते हैं। यशपाल कृत दादा कामरेड, देशद्रोही, पार्टी कामरेड, मनुष्य के रूप, झूठा सच, मेरी तेरी उसकी बात उपन्यास में कथा कहने की अद्भुत क्षमता है। पर पूर्व निर्मित विचारधारा को रोपित करने की उत्कट प्रेरणा के फलस्वरूप उनके उपन्यासों की पात्र स्थितियां और परिणीतिया भी पूर्व निर्मित हो गई हैं। वस्तुतः वे प्रेम को कामेच्छा के अतिरिक्त और कुछ नहीं मानते ऐसी स्थिति में वे अपने बाड़े के बाहर जीवन को बेहतर आयामों में देख पाने में असमर्थ रहे हैं। भगवतीचरण वर्मा मध्यवर्ग के माध्यम से अंकित करते हैं। उनके टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दांव, भूले बिसरे चित्र, सामर्थ्य और सीमा, रेखा और सबहि नचावत राम गोसाई मुख्य उपन्यास है। वर्मा जी तात्कालिकता को तीखेपन के साथ चित्रित नहीं कर पाते हैं, फिर भी वे एक सफल उपन्यासकार हैं। उपेंद्रनाथ अश्क जिन्हें प्रेमचंद परंपरा का उपन्यासकार कहा जाता है। पर समग्र अर्थ में वे इस परंपरा से जुड़ नहीं पाते जहां तक मध्यवर्गीय परिवारों और व्यक्तियों की स्थिति को समस्याओं का और उस परिवेश का संबंध है वहां तक में प्रेमचंद परंपरा के उपन्यासकार है। बल्कि प्रेमचंद की अपेक्षा अधिक यथार्थवादी और प्रमाणिक भी हैं। किंतु प्रेमचंद के व्यक्तित्व और जीवन चेतना का अभाव है। गिरती दीवारें उनका सर्वोत्तम उपन्यास है। जिसमें मध्यवर्गीय नैतिकता व वर्जनाओं को तोड़ने की प्रेरणा और इसकी सफलता का रहस्य है। शहर में घूमता आना और एक नन्हीं कंदील इस उपन्यास के अगले खंड हैं। और अपने आप में पूर्ण हैं गर्म राख, बड़ी बड़ी आंखें, पत्थर अल पत्थर भी इनका प्रमुख उपन्यास है। अमृतलाल नागर अपने उपन्यासों में व्यक्ति व समाज के सापेक्ष संबंधों को चित्रित किया है। नवाबी मसनद, सेठ बांके मल, महाकाल, बूंद और समुद्र, अमृत और विष, शतरंज के मोहरे, सुहाग के नूपुर, एकदा नैमिषारण्य और मानस का हंस इनके प्रमुख उपन्यास है। जिसमें बूंद और समुद्र अपने विस्तार व गहराई के कारण सबसे महत्वपूर्ण बन पड़ा है। इसमें बूंद व्यक्ति का और समुद्र समाज का प्रतीक है।

ऐतिहासिक उपन्यास

हिंदी उपन्यास के विकास के इस दौर में इतिहास संबंधी नया दृष्टिकोण सामने आया। पहले किशोरीलाल गोस्वामी ने ऐतिहासिक उपन्यासों में तथ्य और कल्पना के रचनात्मक पक्ष की चिंता ना कर उसमें कौतूहल, उत्सुकता, साहसिकता, मनोरंजन और रोमांस को प्रमुखता दी थी। वृदावनलाल वर्मा के प्रारंभिक उपन्यासों में भी ये तत्व लक्षित होते हैं, पर रोमांटिक आदर्श और आंचलिकता के पुट के कारण वे संयमित हो गए हैं। वृदावनलाल वर्मा ने तो सामाजिक उपन्यास भी लिखे पर उनकी ख्याति विशेषतः विराटा की पद्मिनी, झांसी की रानी, कचनार मृगनयनी, अहिल्याबाई, माधोजी सिंधिया, भुवन विक्रम आदि ऐतिहासिक उपन्यासों के लिए हैं। जिसमें झांसी की रानी और मृगनयनी मुख्य है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का बाणभट्ट की आत्मकथा, चारुचंद्र लेख और पुनर्नवा के अतिरिक्त उनका एक अन्य उपन्यास अनामदास का पोथा भी प्रमुख है। द्विवेदी जी के उपन्यास इतिहास के तथ्यों पर आधारित नहीं है। उनमें कल्पना के आधार पर ऐतिहासिक वातावरण की अर्थवान श्रृष्टि की गई है। यह अर्थवत्ता उनके नए ऐतिहासिक दृष्टिकोण की देन है। यशपाल की दिव्या भी कल्पनामिश्रित ऐतिहासिक उपन्यास है और अमिता इनका दूसरा ऐतिहासिक उपन्यास है। राहुल सांकृत्यायन और रांगेय राघव के ऐतिहासिक उपन्यासों में मार्क्सवादी जीवन दृष्टि की स्थापना मिलती हैं। सिह सेनापति और जय यौधेय राहुल जी के प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास है तो राघव जी के मुर्दो का टीला मुख्य है।

आंचलिक उपन्यास

आंचलिक उपन्यासों में फणीश्वर नाथ रेणु का मैला आंचल मुख्य हैं। जहां से आंचलिकता की शुरुआत होती है। इसके बाद बाबा नागार्जुन आते हैं। जो रतिनाथ की चाची, बलचनमा, नई पौध, बाबा बटेश्वरनाथ, दुखमोचन, वरुणा के बेटे इत्यादि प्रमुख उपन्यासों की सृष्टि करते हैं। उदय शंकर भट्ट का सागर लहरें और मनुष्य भी इसी धारा की प्रसिद्ध कृति हैं। भैरव प्रसाद गुप्त का सती मैया का चौरा मार्क्सवादी दृष्टिकोण से लिखा गया प्रमुख आंचलिक उपन्यास है। राही मासूम रजा का आधा गांव शिया मुसलमानों की जिंदगी पर लिखा गया पहला उपन्यास है। इसमें भारत विभाजन के पहले और बाद की जिंदगी को उभारा गया है। तनहाई और टूटन इसमें एक विशेष ऐतिहासिक संदर्भ में चित्रित हैं। शिवप्रसाद सिंह ने अपने उपन्यास अलग-अलग वैतरणी में आधुनिकता बोध का सन्नी विष्ट करने की कोशिश की है। इसमें उस परिवेश का चित्रण है। जिसमें

नए पुराने मूल्यों नए पुरानी पीढ़ी भिन्न-भिन्न वर्गों और जातियों के टकराहट में सारे मूल्य गड्डमड्ड हो जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी वैतरणी में घिर जाता है। वैतरणी को पार न करने का मतलब है- नरक। गांव नरक हो गए हैं। जहां अलगाव और टूटन कई स्तरों पर घटित होते हैं। वैयक्तिक पारिवारिक सामाजिक तथा समूचे गांव के स्तर पर राम दरश मिश्र का पानी का प्राचीन, जल टूटता हुआ तथा सूखता हुआ तालाब मुख्य है। तो हिमांशु श्रीवास्तव का रथ के पहिए भी अपने ढंग का प्रभावशाली ग्रामांचली उपन्यास है।

सामाजिक उपन्यास

सामाजिक चेतना के उपन्यासकारों में मन्मथ नाथ गुप्त, भैरव प्रसाद गुप्त, अमृतराय, लक्ष्मी नारायणलाल, राजेंद्र यादव आदि नवीन सामाजिक चेतना के उपन्यासकार हैं। मन्मथ नाथ गुप्त का बहता पानी, भैरव प्रसाद गुप्त का मशाल और गंगा मैया तथा अमृतराय का बीज, नागफनी का देश और हाथी के दांत वर्ग संघर्ष और प्रगति के सूचक उपन्यास है। काशी नाथ जी का अपना मोर्चा भी इसी शैली का मार्क्सवादी उपन्यास है। लक्ष्मी नारायण लाल का मन वृंदावन धरती की आंखें, काले फूल का पौधा और रूपाजीवा में भी सामाजिक चेतना को उभारने की कोशिश की है। राजेंद्र यादव के उपन्यासों में प्रेत बोलते हैं, उखड़े हुए लोग तथा एक इंच मुस्कान (मन्नू भंडारी के साथ सहयोगी लेखन) प्रमुख है। शिवप्रसाद जी की गली आगे मुड़ती है, गिरीश अस्थाना का धूपछाही रंग और मेहरून्निसा परवेज का उसका घर भी सामाजिक चेतना को सशक्त अभिव्यक्त देने वाले प्रमुख उपन्यास है।

कविता में नए प्रयोगों के साथ-साथ कहानी उपन्यास आदि में भी नये प्रयोग हुए। पूर्ववर्ती लेखकों में जैनेंद्र और अज्ञेय ने प्रयोग में कहानी और चरित्र का पूरा ध्यान रखा था। पर इस दौर में कहानी का तत्व क्षीण हो गया। जिससे कथानक का पुराना रूप भी विघटित हो गया तथा अपने क्रियाकलाप के प्रति सचेत एवं तराशे हुए पात्र नहीं रह गए थे। प्रभाकर माचवे, धर्मवीर भारती, शिवप्रसाद मिश्र रूद्र, गिरधर गोपाल, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि के उपन्यास इस श्रेणी के हैं। भारती का सूरज का सातवां घोड़ा प्रमुख है तो रूद्र की बहती गंगा, गिरिधर गोपाल की चांदनी रात के खंडहर मे चौबीस घंटों की जिंदगी का विश्लेषण किया है। चौबीस घंटे की कालावधि के कारण इसमें चुनी हुई परिस्थितियों घटनाओं और मनोदशा के ऊपर तीव्र प्रकाश डालकर उन्हें प्रभावशाली बनाने की सुविधा हुई है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कृत सोया हुआ जल में एक यात्रीशाला में ठहरे हुए यात्रियों की एक

रात की जिंदगी का वर्णन है। नरेश मेहता का डूबते मस्तूल, ख्वाजा बदीउज्जमा का एक चूहे की मौत भी अनेक प्रकार की विसंगतियों से भरे हुई प्रयोगशील उपन्यास है। यंत्रीकरण व महायुद्धों और अस्तित्ववादि चिंतन के फलस्वरूप आधुनिकता की जो स्थिति उत्पन्न हुई उसे लेकर भी पिछले दशक में उपन्यासों की रचना हुई। आस्थाविहीन समाज अनिश्चय की स्थिति में लटके हुए इंसान और आत्म निर्वासन की अभिव्यक्ति देने की पहल मोहन राकेश ने अपने उपन्यास अंधेरे बंद कमरे में की। इसके अनुसार प्रेम कोई शाश्वत उदात्त मूल्य नहीं रह गया है। वैयक्तिक महत्वाकांक्षाए और आधुनिक जीवन की सफलताएं प्रेम की आंतरिक व्यवस्था में दरारें पैदा कर देती हैं। उनका दूसरा उपन्यास न वाले आने वाला कल आधुनिकता से अधिक प्रभावित है। निर्मल वर्मा का वे दिन आधुनिक सुविधा से संपन्न उपन्यास है। तो राजकमल चौधरी का उपन्यास मछली मरी हुई समलैंगिकों स्त्रियों की कहानी है। श्रीकांत वर्मा का दूसरी बार, महेंद्र भल्ला का एक पति के नोट्स, कमलेश्वर का काली आंधी आधुनिकता के झोंके में लिखे गए। इसी प्रकार की रचनाएं नरेश मेहता का उपन्यास यह पथ बन्धु था तथा नदी यशस्वी रचनात्मक स्तर पर आधुनिक हैं पर उनमें न तो आधुनिकतावादी नुकते हैं ना अकेलेपन की गुहार और ना ही आधुनिकता के भाषाई मुहावरे। श्री लाल शुक्ल कृत राग दरबारी रिपोर्ताज शैली में लिखा गया उपन्यास है। यद्यपि इसकी कथा ग्रामांचल से संबद्ध हैं, फिर भी आंचलिक नहीं है। इसमें स्वतंत्र देश की नवीन व्यवस्थाओं का जो नारों के रूप में ही जीवंत है गहरा माखौल उड़ाया गया है। इसे ऐठी हुई रोमांटिकता या ऐठी हुई आधुनिकता भी कहा जा सकता है। आधुनिकता बोध के उपन्यासों की उपयुक्त परंपरा में निर्मल वर्मा का लाल टीन की छत, मन्नू भंडारी का आपका बंटी भी काफी प्रसिद्ध है। और भी बहुत सारे प्रसिद्ध उपन्यास हैं। जिसमें कुछ इस प्रकार हैं जैसे- गिरिराज किशोर का पहला गिरमिटिया, शिवप्रसाद सिंह का नीला चांद, विवेकी राय का सोना माटी, समर शेष है, कृष्णा सोबती का समय सरगम, नरेंद्र कोहली महासमर, ना भूतो ना भविष्यति, हिमांशु जोशी समय साची है, मृदुला गर्ग कठगुलाब, चितकोबरा, मंजूर एहतेशाम सूखा बरगद, सूर्यवाला, अग्नि पंखी, नासिरा शर्मा का शाल्मली, जिंदा मुहावरे, प्रभा खेतान छिन्नमस्ता, पीली आंधी, अलका सरावगी शेष कादंबरी, चित्रा मुद्गल आवां, विनोद कुमार शुक्ला दीवार में एक लड़की रहती थी, सुरेंद्र वर्मा मुझे चांद चाहिए, मिथिलेश्वर प्रेम न बाड़ी उपजे, काशीनाथ सिह काशी का अस्सी, संजीव धार, जंगल जहां शुरू होता है, सूत्रधार, पंकज बिष्ट उस चिड़िया का नाम, अब्दुल बिस्मिल्लाह झीनी झीनी बीनी चदरिया, स्वयं प्रकाश बीच का समय, असगर वजाहत कैसी आग लगाई, भगवानदास मोरवाल काला पहाड़ इत्यादि प्रमुख उपन्यास हैं।

हिंदी उपन्यास की प्रवृत्तियां इस बात का प्रमाण है कि हिंदी उपन्यास में बढ़ी सक्रियता रही है। और वस्तु एवं शिल्प के स्तर पर बड़ी विविधता आई है। इस विविधता का कारण कई पीढ़ियों का एक साथ सक्रिय होना है। जब पीढ़ी बदलती है तो उसकी संवेदना, उसकी जीवन दृष्टि में भी मौलिक और सूक्ष्मपरिवर्तन आता है। क्योंकि संवेदना और दृष्टि के निर्माण में जहां व्यक्ति की अपनी निजी जैविक संरचना पारंपरिक संस्कार अपनी भूमिका निभाते हैं, वहीं उसका परिवेश भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हिंदी के उपन्यासकारों ने सामूहिक अनुभव और मूल्य प्रणाली से वैयक्तिक अनुभव और मूल्य प्रणाली की दिशा में यात्रा की है। पूंजीवादी, बाजारवादी और उपभोग वादी अर्थव्यवस्था, महानगरीय परिवेश और सामाजिक गतिशीलता ने अब उपन्यासकारो को वर्ग प्रतिनिधिकता से अलग करके स्वायत्त व्यक्ति इकाई बना दिया है।

इस प्रकार से हिंदी उपन्यास अपनी एक लंबी यात्रा को पार कर चुका है। और अभी उसकी अनंत की यात्रा बाकी है, जिस पर वह निरंतर बढ़ रहा। हिंदी उपन्यास अब तक लगभग अपनी एक सौ चालीस-पैतालीस वर्षों की यात्रा पूरी की है। जिसमें अनेक प्रकार के प्रयोग हुए और आज भी हो रहे हैं। जिससे इसकी कथा भूमिका काफी विस्तृत व वैविध्य पूर्ण हो चुकी है। संवेदना के स्तर पर भी हिंदी उपन्यास जीवन के अनेक परिचित-अपरिचित स्तरों को प्रस्तुत कर रहा है। महानगरी जीवन, आंचलिक जीवन, वर्गीय जीवन की विडंबना, ग्रामीण जीवन के संघर्षों, अवरोधों और टूटते बनते रिश्ते, नारी जीवन की यातना और त्रासदियों तथा ऐतिहासिक, पौराणिक जीवन की पुनर्व्याख्याओं से समृद्ध होता हुआ युग है यह। हिंदी उपन्यास संभावना के नए क्षितिज पर पहुंच रहा है। समाज में चिर परिचित उपेक्षित दलितों के जीवन के प्रति संवेदना और गहरी सहानुभूति अभिव्यक्ति भी उपन्यासों में की जा रही है। इन्हीं वर्गों से आने वाले अनेक लेखक तल्ख स्वर में सामाजिक न्याय की मांग करने लगे हैं। हिंदी भाषा के व्यापक प्रचार-प्रसार के साथ हिंदीतर प्रांतों के लेखक भी हिंदी में लिखने लगे हैं। और उनके माध्यम से हिंदी भाषी प्रांतों के बाहर का जीवन यथार्थ हिंदी उपन्यास में अभिव्यक्ति पाने लगा है। जिससे उसका दायरा भी बढ़ा हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विदेशों से हमारा संपर्क बढ़ा शिक्षित युवक के साथ-साथ लेखकों के भी विदेशी दौरे हुए जिसके फलस्वरूप

अब हिंदी उपन्यासों में अंतरराष्ट्रीय परिवेश का भी चित्रण भी होने लगा है। इसके साथ-साथ प्रवासी साहित्य भी हिंदी में लिखा जाने लगा है। जो इसकी लोकप्रियता का सूचक है। इस प्रकार हिंदी उपन्यास मानव जीवन के साथ निरंतर एक सार्थक दिशा में आगे बढ़ रहा है। हिन्दी उपन्यास का भविष्य अत्यंत उज्ज्वल व चमकदार है। भविष्य में वह भारतीय समाज का पूर्ण प्रतिनिधित्व करने वाला है। आज हिंदी साहित्य में सर्वाधिक चर्चित और लोकप्रिय विधा के रूप में उपन्यास को मान्यता मिल चुकी है। इसका लेखन भी काफी तीव्रता से हो रहा है। और यह दिन पर दिन अपने लिए नए विषयों का चयन कर रहा है। जिससे उसका विस्तार अत्यंत व्यापक हो गया है। और इसके लेखन की कई शैलियाँ भी विकसित हो चुकी हैं। इसके साथ-साथ इसके विषय में भी बड़ी जटिलता आ चुकी है। लोक प्रिय हो चुका है। इन सबके कारण अब उपन्यास को हिन्दी साहित्य में आधुनिक महाकाव्य की संज्ञा दी गई है। यानि उपन्यास हिन्दी साहित्य में अनुवाद से शुरू होकर साहित्य की लोक प्रिय विधा होने के साथ उसके महकाव्यत्व तक का सफर यह करता है। यह हिन्दी उपन्यास की एक बड़ी सफलता है और यह उसकी लोकप्रियता के कारण ही हो पाया है।

उपन्यास की परंपरा में मध्यवर्गीय जीवन का उदय व विस्तार

हिंदी उपन्यास का उदय गद्य साहित्य की अन्य विधाओं की भाति भारतेंदु युग में होता है। परंतु हिंदी उपन्यासों में मध्य वर्ग का उदय या वर्ग व्यवस्था का उदय उपन्यास के विषयवस्तु के रूप में थोड़े बाद में होता है। पर सामान्य व्यवहार व व्यवस्था में भारतेंदु युग से भारतीय समाज में मध्यवर्ग पदार्पण कर चुका था। क्योंकि जब भारतीय समाज की परंपरागत वर्ण व्यवस्था पूंजीवादी, साम्राज्यवादी व्यवस्था में कमजोर पड़ती है। तब पूजी या अर्थ आधारित नये वर्ग व्यवस्था का उदय होता है। जिसे उच्च वर्ग, मध्य वर्ग व निम्न वर्ग कहा गया जो वास्तव में अर्थ आधारित हैं। परंतु यह अभी व्यवहार में ही था लेखन में नहीं आया था। साहित्य में इस ओर ध्यान बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक में जाता है। और इस वर्ग के पात्रों की स्थितियां, मनोदशाएं, संषर्घ,

चरित्र इत्यादि पर आधारित कथावस्तु का निर्माण होता हैं। जिसको हम निश्चित तौर पर तो नहीं क्योंकि कोई भी परिवर्तन अचानक या एकाएक नहीं होता, पर यदि हम एक बिंदु निर्धारित करना चाहे तो लगभग प्रेमचंद व उनके उपन्यास सेवासदन को हम एक बिंदु मान सकते हैं। जहाँ से इस प्रकार के पात्र व स्थितियों का जिक्र मिलता हैं। इसके बाद मध्य वर्ग उपन्यास साहित्य के केन्द्र बिन्दु में स्थापित हो जाता है। इस बिंदु पर भारतीय समाज में भी एक प्रकार का द्वन्द्व समाहित है। कारण कि उत्तर भारतीय समाज आज भी वर्ग की अपेक्षा वर्ण पर अधिक जोर देता है। और इसमें अभी भी बुरी तरह से जकड़ा हुआ है। जबकि इसके विपरीत भारत का पश्चिमी भाग बहुत कुछ हद तक इस मकड़जाल से आजाद है। इसका असर हम दोनों भागों का जीवन स्तरीय जीवन विकाश की तुलना कर स्पष्ट देख सकते हैं। हम सब इसके पहले उपन्यास का विकास देख चुके हैं अब यहां पर हम वर्ग का विकास व मध्यवर्ग की स्थिति पर चर्चा करेंगे।

किसी भी परिस्थितियों, विचारों या परिवर्तनों के पृष्ठभूमि में कुछ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कारण हुआ करते हैं। और यह परिवर्तन जहां से साफ-साफ दिखाई देने लगता है, वहां से हम उसके उदय या आरंभ की बात करते हैं। पर उसकी भूमिका कहीं न कहीं पहले से विद्यमान रहती है और यह उपर्युक्त अवसर पाकर प्रस्फुटित हो जाती है। जहां तक मेरा मानना है मध्य वर्ग या वर्ग व्यवस्था कोई अचानक से जन्मी व्यवस्था या वर्ग नहीं है। यह भारतीय समाज के वर्णवादी व्यवस्था में भी कहीं न कहीं पहले से विद्यमान रहा होगा। पर सही अवसर न मिलने पर दबा था। पर जब पूरी दुनिया पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के लपेटे में आती है तो भारतीय उससे अछूता कैसे रह सकता हैं। यहां भी उसकी हलचले आती हैं। वह भी अंग्रेजी के शासनकाल में जो परिवर्तन को हमेशा से अधिक महत्व देते रहे हैं। इसी परिवर्तन में भारतीय समाज अपनी पुरानी व्यवस्था से चरमराता है। और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में वर्ग का उदय होता है। जो मुख्यतः अर्थ आधारित समानता की वकालत करते हैं हुए आर्थिक दृष्टि से संपन्न या समान व्यक्तियों को अपना एक वर्ग मानता है। भारतीय समाज में आज इस पर अत्यधिक जोर है। और व्यक्ति की सामाजिक स्थिति भी लगभग इसी कसौटी पर की जा रही है। इस वर्ग व्यवस्था को समाज शास्त्रियों ने मुख्यतः तीन वर्गों में बांटा है जो निम्नलिखित है-

उच्च वर्ग

मध्यवर्ग

निम्न वर्ग

कहीं-कहीं इसका उपभेद भी किया गया है जैसे-

उच्च वर्ग

उच्च मध्यवर्ग

मध्यवर्ग

निम्न मध्यवर्ग

निम्न वर्ग

मार्क्सवादी सिद्धांत में अर्थ व श्रम को आधार मानते हुए दो ही वर्गों की चर्चा की गई हैं। जिसमें पहला बुर्जुआ वर्ग या शोषक वर्ग जो साधन संपन्न व धन संपन्न है। लेकिन उसके पास श्रम नहीं है। और दूसरा है सर्वहारा वर्ग या शोषित वर्ग जिसके पास श्रम के अलावा और कुछ नहीं है। इस सिद्धांत में मार्क्स पूंजीवाद को दलीलें देते हुए अर्थ व श्रम की समानता की बात करता है।

उच्च वर्ग

वर्ग की भावना हमेशा एक खायीं पैदा करती हैं। असमानता, भेद, अमीरी-गरीबी, ऊंच-नीच, छोटा-बड़ा, कम-ज्यादा इस प्रकार की बहुत सारी विषमताओं को जन्म देती है। वर्गों में उच्च वर्ग सबसे संपन्न वर्ग है। जिसमें भौतिक सुख-सुविधाओं से संपन्न तथा समाज में सबसे उच्च आया वाला वर्ग उच्च वर्ग होता है। जिसमे राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पूंजीमालिक, निवेशक, अर्थव्यवस्था के संचालक, व्यापारी, नेता व उच्च पदस्थ अधिकारी सम्मिलित हैं। यह वर्ग शोषण व अपनी सुख-सुविधाओं में जरूरत से ज्यादा विश्वास करता है। घोटालेबाज, भगोड़े तथा शासन सत्ता से मिलीभगत इनकी खास विशेषताएं हैं। डॉक्टर पांडुरंग पाटील ने लिखा है कि- "समाज का यह वर्ग साधन संपन्न होता है। इसका जीवन मजदूरों के श्रम पर अवलंबित होता है। किंतु अपनी प्रपंच बुद्धि तथा पैसों के बल पर यह वर्ग सरकारी मशीनरी का सहयोग प्राप्त कर जनसामान्य को आक्रांत करता है।"17

अर्थव्यवस्था तथा राजव्यवस्था निश्चित रूप से इन्हीं के हाथ में समाहित हुई रहती है। और यह वर्ग अपनी ऊंची-उची अट्टालिकाओ, डाकबंग्लो, देश-विदेश की भौतिकता पूर्ण जीवन का पूर्ण सुख भोगी होता है। सांस्कृतिक क्लब पार्टी डांस इन के मनोरंजन के साधन हुआ करते हैं। इनको किसी भी कार्य को करने के लिए सोचने की जरूरत नहीं होती हैं। और ये यह मानकर चलते हैं कि इनका वचन ही इनका कानून हैं। आत्म केंद्रीयता अनैतिकता का बौद्धिक समर्थन आस्थाओं का खोखलापन आदि को हम इस वर्ग की प्रमुख विशेषताएं मान सकते हैं।

मध्य वर्ग

मध्यवर्ग भारतीय समाज का धुरी है। जो सामाजिक संरचना में उच्च वर्ग व निम्न वर्ग दोनों का प्रतिनिधित्व करता हुआ और दोनों ओर से लगा हुआ चलता है। वह ऊपर की भी ओर देखता है और नीचे की ओर भी। सर्वाधिक आबादी इसी मध्य वर्ग की है। यह वर्ग कोई वर्ण व्यवस्था की तरह परंपरागत या जन्मजात नहीं है। बल्कि यह आर्थिक आधार पर निर्मित व्यवस्था है। जो अपने श्रम से अर्जित की जाती है। इसकी स्थिति विविधता में होती है तो कहीं कहीं अपूर्णता में भी होती है। यशपाल ने मध्य वर्ग पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि- "मध्यम श्रेणी अनिश्चित स्थिति के लोगों की अद्भुत पंचमेल खिचड़ी हैं। कुछ लोग मोटरों और शानदार बंगलों का व्यवहार करते हैं और विनय से अपने आप को इस श्रेणी का बताते हैं। दूसरे लोग मजदूरों से असहाय सी स्थिति में रहकर भी केवल सफेदपोश और शिक्षित होने के बल पर इस श्रेणी का अंग होने का दावा करते हैं।"18

मध्य वर्ग का जीवन सामान्यतः दो स्तरों का जीवन होता है। एक तो सार्वजनिक जीवन और दूसरा निजी जीवन। सार्वजनिक जीवन में वह आधुनिकता की परियोजना या सामाजिक बदलाव रुढियों आडंबरो का तो विरोध करता है। और अमान्य या खारिज भी कर देता है पर वही निजी जीवन में इस अनुमोदन या विचार के खिलाफ जाकर रुढियों और कर्मकांड से चिपक जाता है। यह इसकी दोहरी मानसिकता व इसकी विडंबना है। और यह स्थिति इसको हर स्तर पर जकड़ रखी है। इस प्रकार यह एक गहरे द्वन्द्व में आधुनिकता व परिवर्तन को स्वीकारते हुए अपनी जड़ व रुढ़ परंपराओं से भी जुड़ा रहता है। इस द्वन्द्व का एक कारण यह भी है कि भारतीय समाज किसी बड़े परिवर्तन के लिए जल्द तैयार नहीं होता। यही कारण हैं कि वह किसी भी परिस्थितियों का सबसे बड़ा शिकार हुआ करता है। और उसकी आलोचना भी करता है और उसका भागीदार भी होता

है। क्योंकि उसके लिए अपने स्वार्थ से अधिक स्थाई आदर्श शायद ही कोई और हो। और उसकी समस्या है कि स्वार्थ से उपजी अपेक्षाओं का इस व्यवस्था में पूरी तरह संतुष्ट नहीं किया जा सकता है। डॉ कुमार पाल शर्मा ने लिखा है कि- "इस नवीन व्यवस्था ने एक नए मध्यमवर्ग को जन्म दिया जो बहुत जागरूक और चेतना संपन्न होता है। अपने बौद्धिक चिंतन के कारण यह रूढ़ियों का सहज विरोधी होता है और नवीनता का समर्थन करता है। अब संगठित रूप से इसने जाति व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष आरंभ कर दिया है। जाति व्यवस्था के समर्थकों के पास अब कोई ऐसा प्रबल तर्क नहीं रह गया है। जिसके सहारे ये इस जड़ व्यवस्था की रक्षा कर सकें।"19

कुछ इसी तरह का विचार डॉक्टर श्यामसुंदर घोष के हैं। "यह वर्ग समाज के बीच का हिस्सा होता है। जो समाज को अनुप्रस्थ ढंग से विभाजित करता है। और जिसमें कमोबेश एक ही रुतबे या ओहदे के लोग सम्मिलित होते हैं। जिनकी विशेष आर्थिक स्थिति और सामाजिक स्थिति एवं प्रवृत्ति होती है। जो बहुधा उनकी आय व्यवसाय शिक्षा और वंश परंपरा से निर्धारित होती हैं।"20

पाश्चात्य प्रभाव भारतीय मध्यवर्ग को इस कदर प्रभावित किया है कि वह अपने आपको हीनता पूर्णा महशूस करने लगा हैं। यह एक पतन का बड़ा उदाहरण है कि व्यक्ति को अपनी ही सभ्यता संस्कृति से संकोच होने लगे। पश्चिम की नकल करने की प्रवृत्ति बेहद व्यापक और गहन हो गयीं हैं। यहां तक कि उसके कारण प्रतिभा और सृजनात्मकता को नुकसान पहुंचाना शुरू हो गया हैं। अधिकांश शिक्षित भारतीय अपनी जीवनशैली आकांक्षाओं और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति में बिना सोचे समझे पश्चिम की अनुकृति बनकर रह गए हैं।

अन्य वर्ग की तुलना में यह वर्ग सबसे बड़ा वर्ग होता है। इस वर्ग के अंतर्गत अफसर, डॉक्टर, वकील, प्रोफेसर एवं व्यापारी आदि आते हैं अर्थात वेतन भोगी और गैर वेतन भोगी दोनों ही इसकी सीमा में आते हैं। आरंभिक मध्य वर्ग और आज के मध्यवर्ग में एक गहरा अंतर भी आ चुका है। पहले जमींदार महाजन सेठ साहूकार मुखिया इत्यादि आते थे। पर आज इनका स्वरूप बदल चुका हैं। पर आज अनेक कठिनाइयों व संघर्षो के बाद सफलता पाना इस वर्ग की खास प्रवृत्ति बन गयीं हैं। विद्वानों ने इस वर्ग का अध्ययन व विश्लेषण करते हुए इसकी स्थिति के अनुसार तीन भागों में विभक्त किया है जो इस प्रकार से हैं-

उच्च मध्य वर्ग

मध्य मध्य वर्ग

निम्न मध्य वर्ग

इस क्रम को यदि हम देखे तो हम जैसे जैसे ऊपर से नीचे आएंगे वैसे वैसे इसकी संख्या में निरंतर वृद्धि होती चली आती है यानी कि निम्न मध्यवर्ग अपनी संख्या में सर्वाधिक है। जो सबसे ज्यादा संघर्षरत है। वह अपने आप को उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग के बीच की कड़ी के रूप में पाता देख सबसे अधिक बेचैनी व संघर्षशील होता है। और इसकी चिंता रोजी-रोटी तक ही आकर सीमित रह जाती हैं। इस वर्ग में कला के लिए कोई विशेष का स्थान नहीं होता। पेट की रोटी व रहने का छत ही इनकी सबसे बड़ी जरूरत है। और तक तो यह सोच ही नहीं पाते। और न यह उच्च वर्ग जैसा बन पाते हैं और ना निम्न वर्ग की स्थिति में रह पाता है विडंबना के साथ जीवित रहना ही इनकी नियति बन जाती है। उच्च मध्य वर्ग तथा उच्च वर्ग की विशेषताएं थोड़ी-बहुत अंतराल के साथ लगभग एक जैसी होती हैं। इसमें विलासिता अपने चरम पर होती हैं। तथा संसाधनों को एकत्रित करना तथा उसका पूर्ण लाभ की प्रबल भावना इनमें होते हैं। मध्य मध्य वर्ग के बुद्धिजीवी बौद्धिक चर्चा से अपने ज्ञान की भूख मिटाने वाले हैं। इस वर्ग पर पाश्चात्य प्रभाव का सर्वाधिक असर होता है। परिणाम स्वरूप अंधानुकरण की प्रवृत्ति इसमें अत्यधिक बढ़ती जा रही है।

निम्न वर्ग

इस वर्ग की जिंदगी का कोई ठिकाना नहीं होता। दिहाड़ी मजदूर, कामगार, ठेला रिक्शा करके जीवन यापन करता हुआ वर्ग निम्न वर्ग है। दुख दरिद्र, अभाव, तरह तरह की परेशानियां जिंदगी व मौत की जद्दोजहद, दैनंदिनी जरूरतों का अभाव ही अभाव, इनका अपने जन्म के समय विरासत में मिला उपहार जैसा होता है। जिनसे इनका पीछा कभी नहीं छूट पाता है। आपसी कलह, नशाखोरी भी इनमें प्रचुरता से पाई जाती है। उच्च वर्ग तथा मध्य वर्ग दोनों द्वारा शोषित तथा दोनों के द्वारा सताया जाने वाला होता है। और दोनों इनके जीवन पर अपना हक और अधिकार समझते हैं। और जी भर इनके श्रम का उपयोग कर अपनी खाल मोती करते हैं। रोटी के जुगाड़ से इनको फुर्सत ही नहीं मिलती उसी में लगे रहने से इनके जीवन में कला संगीत सहित्य संदर्भ बोध आदि का इनके जीवन में कोई महत्व नहीं होता। और अर्थभाव के कारण शिक्षा भी नहीं ले पाते जिसके चलते इन्हें साधारण सुविधाओं से भी वंचित रहना पड़ता है। अधिकार बोध व कर्तव्य बोध लगभग नदारद ही रहता है। इसी करण राजनीतिक हिस्सेदारी या राजनीतिक उदासीनता इनमे बानी रहती

है। निम्न वर्ग यह समाज का वह भाग है, जो अपनी जीविका का उपार्जन श्रम से करता है और अधिकतर इस वर्ग का ही शोषण किया जाता है।

इसका जीवन दैनंदिनी जरूरतों के संघर्ष का जीवन होता है। जिसमें ना कोई ठहराव होता है, न स्थायित्वत होता है। बस जिंदगी को जीने की जद्दोजहद इसकी स्थिति को यदि हम देखें तो इनमे निर्धनता अविश्वास संदेह दुर्दशा इत्यादि की भावनाएं प्रबल होती हैं। इनकी जिंदगी बद से बदतर होती है। और इसमें भी जो सबसे निम्न पायदान पर है उसकी तो पूछो मत क्या है, उसकी जिंदगी क्या है उसका जीवन का लक्ष्य क्या हैं कुछ पता नहीं। उसकी जिंदगी को यदि हम सबसे ऊपरी पायदान पर बैठे व्यक्ति से तुलना करें तो यह जो और जहां जीता है वह नरक की जिंदगी है। इससे अधिक और कुछ नहीं। क्योंकि ऐसी जगहों या गली मुहल्ले से उन्हें गुजरते हुए सास लेने में भी दिक्कत होती हैं। नाक भौ सिकुड़ कर चढ़ जाती हैं।

इस प्रकार से यदि हम देखे तो इस वर्ग विभाजन में एक गहरी असमानता व विषमता व्याप्त है। जिसके कारण संपूर्ण मनुष्य कभी एक नहीं हो पा रहा है। उसके मन में कहीं न कहीं वर्ग विषमता व्याप्त है। एक दूसरे से संघर्ष के साथ साथ शोषण में लगा हुआ है। आज शोषण की प्रवृत्ति लगातार बढ़ती जा रही है जिसका शिकार मध्यवर्ग और निम्न वर्ग बनाया जाता रहा हैं।

मध्यवर्गीय जीवन पर केंद्रित प्रमुख उपन्यास

साहित्य हमेशा से सामाजिक ही रहा है। बस वह समय व परिस्थितियों के मुताबिक अपना समाज या स्थान बदलता रहा है। कभी दरबारी तो कभी भोगविलास की शरण में निवास करता रहा पर-आधुनिक काल मे आकर वह अपनी जगह व विषय दोनों को बदलता है। और दरबारी व भोगविलास की जगह वह मनुष्य व समाज के सुख-दुःख से जुड़ता है। आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि "हिंदी साहित्य अपने पुराने रास्ते पर ही पड़ा था। भारतेंदु ने उस साहित्य को दूसरी ओर मोड़कर जीवन के साथ फिर से लगा दिया। इस प्रकार हमारे जीवन और साहित्य के बीच जो विच्छेद पड़ रहा था उसे उन्होंने दूर किया। हमारे साहित्य को नए नए विषयों की ओर प्रवृत्त करने वाले भारतेंदु हरिश्चंद्र ही हुए।"21

इस प्रकार से साहित्य आधुनिक युग मे जीवन की ओर उन्मुख होता हैं। पर मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन के पास यह साहित्य कब पहुंचता है, यह जानने का विषय है। क्योंकि आज के समय में

मध्यवर्ग पूरे विश्व में सर्वाधिक बड़ी आबादी वाला वर्ग है, तो इसको केंद्र में होना कोई बड़ी बात नहीं है। पर हिंदी साहित्य इस बड़े वर्ग से बहुत दिनों तक कटा रहा या मध्य वर्ग हिंदी साहित्य के स्पर्श से दूर रहा। पर समय और परिस्थितियां में हलचल हुयीं। मध्यवर्ग की स्थिति बदलनी शुरू होती हैं। और नवजागरण की शुरुआत होती होते वह केंद्र में आ जाता हैं। पर अभी भी यह हिंदी साहित्य से थोड़ दूर हैं। हिंदी साहित्य में यह बीसवीं शताब्दी मे प्रवेश पाता है। और हिंदी उपन्यास में प्रेमचंद इसके प्रस्तोता होते हैं। हिंदी उपन्यास का शैशव काल भारतीय मध्यवर्ग का भी शैशव काल कहा जा सकता हैं। जैसे-जैसे हिंदी उपन्यासों में परिपक्वता व प्रौढ़ता आती गयीं है वैसे-वैसे मध्य वर्ग का भी दायर बढ़ता गया है। और प्रेमचन्द इसकी स्थिति परिस्थिति, समस्याओं आदि को समझते हुए उसकी त्रासदियों का चित्रण करते हैं।

इन्होंने पहले उर्दू में लिखना शुरू किया जिसमें असरारे मआविद इनका पहला उपन्यास है। हिंदी में उनका पहला उपन्यास सेवासदन (1918) हैं। जो मुख्यतः वेश्यावृत्ति की समस्या पर लिखा गया है। परंतु उसने अपने पूरे प्रतिपाद्य में मध्यवर्गीय जीवन को समेट लिया है। मध्य वर्ग व उसकी समस्याएं प्रेमचंद्र से पूर्व भी विद्यमान थीं और उपन्यासों का सृजन भी प्रचुर मात्रा में हो चुका था। पर मध्यवर्गीय जीवन और उसकी समस्याएं, संघर्ष विवशता को लेखन के साथ जोड़कर प्रस्तुत करना प्रेमचंद्र के द्वारा ही संपन्न हुआ। इसके पहले का उपन्यास साहित्य लिखा तो गया पर वह इतनी शिद्दत व गहराई में नहीं जा पाया कि वह जनजीवन लोकजीवन व उसकी समस्याओं से जुड़ पाए। जितना कि प्रेमचंद्र ने आकर जोड़ा व उसकी संगति स्थापित कि। यह बहुत ही कठिन कार्य था जो प्रेमचंद जैसे बड़ा साधक ही कर सकता था। फिर आगे तो जो धारा प्रवाहित हुई वह निरंतर बहती ही आ रही है।

हिंदी साहित्य के लेखन में बीसवीं शताब्दी का जो लेखन है। वह बहुआयामी व बहू विमर्शवादी लेखन है। उसमें सहानुभूति की अपेक्षा अपने भोगे हुए यथार्थ पर अधिक जोर है। वह चाहे व्यक्तिवादी हो मनोवैज्ञानिक हो यथार्थवादी हो दलित विमर्श हो स्त्री विमर्श हो किन्नर विमर्श हो आदिवासी विमर्श हो ग्रामीण हो आंचलिक हो प्रवासी हो या कोई अन्य इस लेखन में अनुभूति व अनुभूति की प्रामाणिकता व संवेदना सब अपने यथार्थ और नग्न रूप में है। और इस अनुभूति की प्रामाणिकता भोगे हुए यथार्थ से आता हैं। जी मध्यवर्गीय उपन्यास लेखन है, क्यों कि वह अधिक से अधिक उसी वर्ग के साहित्यकारों द्वारा प्रणीत व प्रतिफलित हुआ है जिनका संबंध मध्य वर्ग

से है। इस प्रकार से उसमें विश्वसनीयता व प्रमाणिकता बनी हुई है। प्रमुख मध्यवर्गीय निम्नलिखित हैं-

किशोरीलाल गोस्वामी लिखित चपला उपन्यास मध्यवर्ग की चर्चा करते हुए आगे बढ़ता है। जिसमें मध्यवर्गीय जीवन समस्याओं के साथ व्यभिचार, बलात्कार, भ्रष्टाचार, तथा मदिरापान के दर्शन होते हैं। तो दूसरी और गरीबी तथा बेकारी के कारण घोर निराशा छाई हुई है। तथा आधुनिकता से उच्छृंखल अपने चरम पर है। इसके बाद से एक धारा निकलती हैं, जिसमें सबसे सशक्त बनकर उभरते हैं- प्रेमचंद उनके लगभग सभी उपन्यासों में मध्यवर्ग अपनी पूरी शक्ति व कमजोरी के साथ विद्यमान हैं। उसमें कोई दुराव छिपाव नहीं है। सेवासदन, गबन, गोदान, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कर्मभूमि प्रेमचंद के उपन्यासों में मध्यवर्ग प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष किसी न किसी रूप में विद्यमान ही है। उसकी समस्याएं जटीलताएं व उसका जीवन यथार्थ बखूबी चित्रित है। प्रेमाश्रम में किसानों की दुरावस्था के साथ जमीदारों का अत्याचार बड़े तालुकेदारों का विलासमय जीवन, वकीलों की बेरहमी, पटवारियों, कारिन्दों और मुंशीयों के काले कारनामे, पुलिस की ज्यादती, अदालतों की पोल, अफसरों की धांधली, सब मूर्त हो उठा है। तो गबन में मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन का मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित किया है। नारी की आभूषण प्रियता और पुरुष का आत्मप्रदर्शन मध्यवर्गीय समाज की इन दोनों ग्रंथियों को पति-पत्नी के जीवन में चरितार्थ करते हुए प्रेमचंद ने बड़ी ही सघन और स्वाभाविक कथा सृष्टि की है। पात्रों में मध्य में एक प्रकार का द्वन्द्व है। और वे परिस्थितियों के भंवर जाल में पड़कर संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। गोदान में तो मध्यवर्ग के जीवन की पूरी दास्तान ही समेट लिया गया है, जिसमें जनता के सेवक कहलाने वाले पत्रकार स्वार्थी हैं, दार्शनिक दृष्टि वाले प्रोफ़ेसर इस सीमा तक तटस्थ है कि मजदूरों की हड्डी पर महल खड़ा करते हैं, गांवों और नगरों के बीच में त्रिशंकुवत लटके हुए जमीदार किसानों को सोखकर अधिकारियों की संतुष्ट करते हैं।

विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' अपने उपन्यास मां व भिखारिणी के माध्यम से मध्यवर्गीय समाज के नैतिक मूल्यों को व्यक्त करते हैं। जिसमें वैवाहिक संबंधों के प्रति पतिव्रता वादी दृष्टिकोण, घर में पति का महत्वपूर्ण स्थान, तथा पुत्री की उपेक्षा तथा पुत्र की लालसा, भाग्यवाद में टूट विश्वास इत्यादि का बखूबी चित्रण हैं जो मध्यवर्गीय नियत भी है। जैसे जैसे उपन्यास का विकास होता गया वैसे वैसे यह कई स्तरों पर विभक्त होता गया है। जिसमें मध्यवर्गीय समाजिक चेतना भी अलग अलग स्तरों पर व्यक्त होती रही जैसे- सामाजिक मानवतावादी उपन्यास, स्वच्छंदतावादी उपन्यास,

प्रकृतिवादी उपन्यास, व्याक्तिवादी उपन्यास, मनोविश्लेषणवादी उपन्यास, सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास इन भेदों में मध्यवर्ग के अलग अलग स्थितियों व परिस्थितियों का चित्रण हैं।

सामाजिक मानवतावादी मध्यवर्गीय उपन्यास

इस कोटि के उपन्यासों में मनुष्य की श्रेष्ठता में विश्वास करते हुए, उसकी सभी प्रकार की दुर्बलताओं के बावजूद उसके प्रति सहानुभूति दिखाई गई है। वह मनुष्य के मंगल व उसके विकास में विश्वास करता है। इस श्रेणी के उपन्यास कारों में प्रेमचंद, विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक', सियारामशरण गुप्त, प्रताप नारायण श्रीवास्तव, अमृतलाल नागर, विष्णु प्रभाकर, उदय शंकर भट्ट, आदि प्रमुख मानवतावादी उपन्यासकार हैं। ये मानवतावादी छोटे से छोटे तथा घृणित से घृणित मनुष्य में भी मनुष्यता की ज्योति जगाने की चेष्टा करते हैं। हिंदी साहित्य में यह मानवतावादी विचार धारा संत साहित्य में भी विद्यमान है, किंतु यहां और वहां काफी अंतर है। इस कालखंड में अमृतलाल नागर का प्रमुख उपन्यास बूंद और समुद्र आता है। जिसमें प्राचीन रुढियों का खोखलपन, जातिभेद की व्यर्थता, पूंजीवाद का विरोध राजनीतिक दृष्टि की यांत्रिकता आदि अनेक बातें उभरकर सामने आती हैं। अग्निगर्भा में दहेज की समस्या और उसके दारुण परिणाम की ओर संकेत किया गया है। इस उपन्यास में सामाजिक कुरूपताओं को अधिक दृढ़ता और साहस के साथ उजागर किया है। नागर जी मनुष्य को उसकी दुर्बलता ओं के साथ जीवंत और विश्वसनीय बनाकर प्रस्तुत करने की दिशा में आगे बढ़े हैं। विष्णु प्रभाकर ने नाटक कहानी लेखक और जीवनीकार के रूप में अधिक ख्याति पायीं है, पर वे एक श्रेष्ठ उपन्यासकार भी हैं। इनके प्रमुख उपन्यास निशीकांत, कोई तो, अर्धनारीश्वर है। निशीकांत में 1920 ईस्वी से 1936 तक की सामाजिक राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण किया है। कोई तो में सड़े गले नैतिक मूल्यों मान्यताओं एवं जीवन के विभिन्न पक्षों में लक्षित मानव मूल्यों के पतन पर तीखा प्रहार किया गया है। अर्धनारीश्वर में आपने समाज के लगभग सभी वर्गों की स्त्रियों को सामने रखकर बलात्कार सहित उनकी सभी प्रकार की यातनाओं पर गहरी आत्मीयता के साथ विचार मंथन किया है। उदय शंकर भट्ट के उपन्यासों में नए मोड में मध्यवर्गीय सुशिक्षित और आत्मनिर्भर भारतीय नारी की विवशता को चित्रित किया है। सामाजिक बंधनों से जकड़ी स्त्री अब उसके प्रति विद्रोह कर रही हैं। इस सामाजिक तथा मानवतावादी उपन्यासों में मनुष्यता को सर्वोपरि रखते हुए उपन्यासों का सृजन किया गया है। इस धारा के आदर्श पुरुष गांधी हैं।

व्यक्तिवादी मध्यवर्गीय उपन्यास

व्यक्तिवादी उपन्यासकारों में भगवती चरणवर्मा, उपेंद्र नाथ अश्क, भगवती प्रसाद बाजपेयी, श्री रामेश्वर अंचल शुक्ला, लक्ष्मीनारायण लाल आदि प्रमुख माने गए है। व्यक्तिवादी उपन्यासकारों ने व्यक्त की सत्ता और अस्तित्व को समाज से पहले स्वीकार करता है। उसके सृष्टि में समाज व्यवस्था माध्यम मात्र है, लक्ष्य व्यक्ति होता है। अपने योगक्षेम का वास्तविक निर्णायक व्यक्ति होता है। वह स्वयं अपने प्रति उत्तरदायी होता है। इस श्रेणी के प्रथम उपन्यासकार भगवती बाबू हैं, जो अपने पहले उपन्यास चित्रलेखा से एक बड़े उपन्यासकार के रूप में स्थापित होते हैं। चित्रलेखा पाप पुण्य की शाश्वत समस्या को लेकर लिखा गया एक समाधानमूलक उपन्यास हैं। मध्यवर्गीय जीवन पर लिखा गया इनका दूसरा भूले बिसरे चित्र प्रमुख उपन्यास है। इसमें मध्यवर्गीय परिवार की चार पीढ़ियों की कथा के माध्यम से भारतीय समाज की विगत अर्धशती का इतिहास चित्रित किया गया है सन 1880 से 1930 ईसवी तक के भारतीय जीवन और बदलते हुए मूल्यों का अंकित करना चाहा है। पूरा उपन्यास पाच खंडों में विभाजित है। जिसके पहले दो खंडों में सामंतशाही का तथा तीसरे व चौथे खण्ड मे पूंजीवादी सामंतशाही तथा राजनीतिक चेतना का विस्तार है तो, पांचवे में कथानायक नवल किशोर नये युग चेतना का प्रतीक बनकर आता है। उपेंद्रनाथ अश्क' एक बड़े उपन्यासकार हैं, इनके उपन्यासों में- सितारों का खेल, गिरती दीवारें, शहर में घूमता आइना, एक नन्ही किन्दील, बाधों न नाव इस ठांव चर्चित उपन्यास है। गिरती दीवारें निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति चेतना कथानायक जालंधर शहर का रहने वाला है। वह अपने जीवन में साहित्यकार, संगीतज्ञ,अभिनेता सब कुछ बनना चाहता है, और इसकी तलाश में वह इधर-उधर भटकता है। उसके जीवन में कहीं स्थायित्व तो है ही नहीं, पहले वह एक स्कूल में अध्यापन करता है, फिर लाहौर से एक पत्र का उपसंपादक बनता है, फिर शिमला जाकर कविराज रामदास के यहां वैद्यक किताबें लिखता है। यह उसका आर्थिक भागदौड़ है तो, उसका यौन जीवन भी कुंठा ग्रस्त है। वह कुंती से प्रेम करता है, और उसे प्राप्त नहीं कर पाता, और उसका विवाह चंदा से होता है जिसे वह पसंद नहीं करता। फिर अपनी शाली नील से प्रेम करता है पर उसका भी विवाह एक अधेड़ पुरुष से हो जाता है। इस प्रकार चेतन के माध्यम से जो विसंगति चित्रित की गयीं हैं वह चारों ओर से टूटी हुई हैं गिरी हुई हैं। इसी कथा सूत्र को आगे बढ़ाते हुए शहर में घूमता आइना, एक नन्ही किन्दील और बांधो न नाव इस ठांव इसी कथानक को आगे बढ़ाते हुए पूर्णता को प्राप्त होता हैं।

भगवतीप्रसाद वाजपेई के उपन्यासों की संख्या चौवालीस है। पर इनको प्रसिद्धि पतिता कि साधना से मिलती है। टूटते बंधन भी चर्चित रहा जिसमें नई शिक्षा और नई सभ्यता के बीच आंदोलित

भारतीय नारी के लिए व्यक्तित्व विकास की नई दिशा का संकेत किया है। इनके परवर्ती उपन्यासों में भी मध्यवर्ग के बदलती जीवन संदर्भों को सामने रखकर स्त्री-पुरुष के संबंधों का विवेचन है इनके केंद्र में मध्यवर्गीय स्त्री पुरुष है। लक्ष्मीनारायण लाल ने पंन्द्रह उपन्यासों का सृजन किया जिसमें मुख्य है धरती की आँखें बया का घोंसला, सांप, रूपाजीवा, प्रेम अपवित्र नदी, हरा समंदर गोपी चंदर, कनॉट प्लेस आदि प्रमुख हैं। इनके उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन स्थितियां, उनके संघर्षों, मन द्वन्द्वो का चित्रण बड़ी सुक्ष्मता और गहरी सहानुभूति से उरेहा हैं। अवध के देहात, लखनऊ की गरीब मुस्लिम परिवार की महिलाएं, शरीर बेचने के लिए विवश नर्तकीया, शहरी मध्यवर्ग का संघर्ष, रुपए के माया के समक्ष अस्तित्वहीना होते मानव मूल्य ये सबके सब इनके उपन्यासों में सजीव हो उठे है।

मनोविश्लेषणवादी मध्यवर्गीय उपन्यास

मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों में सर्व श्री जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय और डॉ. देवराज अग्रणी है। इनके उपन्यासों में स्थूल सामाजिक नैतिक संघर्षों के स्थान पर सूक्ष्म नैतिक संघर्ष और जटिल मानसिकता मिलती है। इस धारा के पहले रचनाकार जैनेंद्र हैं। उनके प्रमुख उपन्यास इस प्रकार है- परख, सुनीता, त्यागपत्र, कल्याणी, सुखदा, विवर्त, व्यतीत, मुक्तिबोध आदि। सुनीता इनका प्रमुख उपन्यास है, जिसमें मनोवैज्ञानिक तरीके से मध्यवर्गीय परिवार की विसंगतियों को उजागर करते हुए, उसके अंतः चेतना तक प्रवेश किया गया है। अभी तक उपन्यासों मे संयुक्त परिवार को सुरक्षित रखने पर बल दिया जाता रहा, प्रेमचंद्र ने पुराने मूल्यों के आधार पर पारिवारिक विघटन को रोकने की कोशिश की है। पर पढ़े-लिखे परिवारों में एक और समस्या थी जड़ता और एकनीरसता की। यह समस्या वाह्य न होकर आंतरिक हैं, जो मध्यवर्गीय परिवार में आज भी बनी हुई है। पति पत्नी के बीच संवाद की स्थिति तक नहीं रह जाती। यह संवादहीनता किसी आर्थिक समस्या के कारण नहीं उत्पन्न होता, और ना किसी नैतिक समस्या के कारण। यह बंधे हुए जीवन व बाहरी जीवन से असंबद्ध होने से उत्पन्न होती हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक समस्या है। सुनीता में भी यही संकट उत्पन्न हुआ है। श्रीकांत, हरी प्रसन्न व सुनीता तीनों के अलग अलग व्यक्तित्व से निर्मित व्यक्ति हैं। जो मध्यवर्ती पृष्ठभूमि से आते हैं। जिन की समस्याएं मनोवैज्ञानिक स्तर पर काफी संकट पूर्ण हैं।

त्यागपत्र जैनेंद्र का दूसरा प्रमुख उपन्यास है। जिसमें वैवाहिक जीवन को गत्यात्मक बनाने की. समस्या है। प्रेमचंद के उपन्यासो मे मध्यवर्गीय प्रतिष्ठा समस्या के रूप में आयीं। फिर भी उस वर्ग ने उस घेरे में ही रहने का प्रयास किया। त्यागपत्र में भी घेरा है। मृणाल को आर्यगृहणी के सांचे में ढालने की कोशिश की गई, कड़े अनुशासन में रखा गया, उसकी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाया गया। पर मृणाल कि वैयक्तिकता इस घेरे में नहीं रह सकी। इस उपन्यास में मुख्य रूप से मृणाल का पूरा संघर्ष है वह सामाजिक व व्यक्तिगत दो स्तरों पर घटित होने वाला संघर्ष है। अनमेल विवाह, कोयले वाले के पास जाकर तन की कथित पवित्रता को खोना, समाज से निर्वासित होकर छोटे व असभ्य लोगों में इंसानियत की तलाश। इस तरह वह सभ्यता के आवरण को हटाकर पूरी तरह से नंगा कर देती हैं। जो मध्यवर्ग का सामाजिक चरित्र भी है। कल्याणी 1940 ई. में आया। इसमें पति पत्नी के बीच आर्थिक समस्या खड़ी होती है। इस समस्या के फलस्वरूप परंपरागत मान्यताओं का एक सीमा तक टूटना स्वाभाविक है। यहां बाहरी दबाव में बदलने के लिए बात करता है, पर हमारे रुढ़ संस्कार बदलाव से रोकते हैं। कल्याणी के पति का यही द्वन्द्व है, और इस द्वन्द्व का शिकार होती है कल्याणी । जो कि वह एक डॉक्टर है, और उसका पति भी डॉक्टर है। पर वह पत्नी से डॉक्टरी नहीं करा ना चाहता लेकिन आर्थिक सुरक्षा के लिए पति डॉ पत्नी से डॉक्टर कराने के लिए बाध्य हैं। लेकिन वह पत्नी को पतितव्रत्य की रूढ़ियों से भी ग्रस्त रखना चाहता है। अंत में कल्याणी मानसिक विसंगतियों से उन्मादग्रस्त और विक्षिप्त हो उठती हैं।

इलाचंद्र जोशी के प्रमुख उपन्यासों में सन्यासी, प्रेत की छाया, निर्वासित, सुबह की भूले, जहाज का पंछी आदि प्रमुख हैं। निर्वासित में माहीप एक भावुक कवि है। वह नीलिमा को प्रेम करता है। किंतु उसका व्यक्तित्व आकर्षण नहीं है। जिस कारण वह अन्य क्षेत्रों में अपनी महत्ता स्थापित करके नीलिमा को प्रभावित करना चाहता है। वह क्रांतिकारी बन जाता है। जिसका अंत एक निराश प्रेमी का अंत बन जाता है। अंत में वह अस्पताल में रोग ग्रस्त होकर मर जाता है। यह समस्या मध्यवर्गीय जीवन के साथ एक गंभीर सामाजिक समस्या बन चुकी है जो आज भी समाज में व्याप्त है। सुबह के भूले उपन्यास में गुलबिया नामक एक साधारण किसान की लड़की मध्यवर्गीय परिवेश में पलकर एक अभिनेत्री हो जाती है। और बाद में वहां के कृत्रिम जीवन से खूब कर पुनः अपने सीधे-साधे ग्रामीण परिवेश में लौट आती है। यह भी एक गहरी समस्यार्हे, मध्यवर्गीय व्यक्ति शुरू शुरू में शहरी जीवन के प्रति आकर्षित होकर भाग पड़ता है। फिर वहाँ से उबकर अपने गांव की ओर रुख करता है। जहाज का पंछी का कथा नायक एक शिक्षित नवयुवक है। जो कलकत्ता

महानगरी में काम की तलाश में भटकता है। कलकत्ता नगरी वह जहाज है जिसमें वह चारों ओर भटक कर लौट आता है। नायक ज्योतिषी के रूप में गिराहकट के रूप में, ट्यूमर के रूप में, धोबी के मुनीम के रूप में, रसोईया के रूप में, लीला के सेवक के रूप में आधुनिक महानगर के विविध जीवन स्थितियों का अनुभव करते हुए मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करता हैं।

अज्ञेय का नदी के द्वीप उपन्यास इनका दूसरा प्रमुख उपन्यास है। जो शिल्प की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध हैं। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र भुवन, रेखा, चंद्रमाधव और गौरा। ये चारों पात्र परिस्थितियों का वरण अपने निजी दृष्टिकोण से करते हैं। डॉ भुवन एक वैज्ञानिक हैं। जो रेखा से प्रेम करता है, और रेखा पति परित्यक्ता है। गौरव भवन की शिष्य है। और चंद्रकांता एक पत्रकार है। जो अपनी पत्नी को नहीं चाहता है, और रेखा व गीरा दोनों के प्रति आकर्षित हैं, पर यह दोनों उसे कोई महत्व नहीं देती। इस बीच भुवन और रेखा की प्रगाढ़ता बढ़ती है और यह प्रगाढ़ता मानवी दुर्बलताओं तक पहुंचती है। जिससे रेखा गर्भवती हो जाती हैं। जो भुवन सामाजिक मान मर्यादा सम्मान की दृष्टि से उसके गर्भ को भंग करता है। यहीं से भूवन व रेखा के बीच दुरावा जाता है। रेखा टूटने लगती है, और उनका विवाह गौरा से करा देती है। यह मध्यवर्गीय परिवार का कुंठित जीवन दर्शन हैं, जिसकी नदी के द्वीप रूप में कल्पना की गई है। पथ की खोज देवराज का प्रमुख उपन्यास है जिसमें आधुनिक मध्यवर्गीय समाज के शिक्षित सदस्यों के जीवन में आने वाली समस्याओं के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के माध्यम से नये पथ का अनुसंधान किया गया है। इसमें प्रेम विवाह धर्म पाप पुण्य व्यक्ति समाज आदि के माध्यम से अनेक प्रश्न उठाए गए हैं। इस प्रकार से मनोवैज्ञानिक उपन्यासों मे मध्यवर्गीय व्यक्ति की दशाओं का मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण किया गया है। उनकी मानसिकता समझ सोच इत्यादि को ध्यान में रखकर इन उपन्यासों की सृष्टि की जाती है। जिससे हम मध्यवर्गीय समाज को मनोविश्लेषणात्मक तरीके से समझ सकते हैं।

सामाजिक यथार्थवादी मध्यवर्गीय उपन्यास

सामाजिक यथार्थवादी उपन्यासकारों में यशपाल, नागार्जुन, मन्मथनाथ गुप्त सर्गेय राघव, भैरव प्रसाद गुप्त, अमृतराय, भीष्म साहनी, अमरकांत, राही मासूम रजा, मारकण्डेय, काशीनाथ सिंह आदि प्रमुख हैं। यशपाल एक बड़े कथाकार हैं, वे बदलते हुए समाज में संदर्भ बदलते रहते हैं, मे यकीन करते हुए स्त्री-पुरुष के संबंधों में ही परिवर्तन की मांग करते हैं। और प्रगतिशील लेखक कथा संगठन के बदलते हुए संदर्भों को सामने लाते हैं। यशपाल की उपन्यास कला का चरम निदर्शन उनके झूठा

सच उपन्यास होता है। यह दो भागों में विभाजित है पहला 'वतन देश और दूसरा 'देश का 'भविष्य' यह उपन्यास मूलतः विभाजन की त्रासदी पर केंद्रित हैं। पर कथा उसने सामाजिक, राजनीतिक मध्यवर्गीय परिवेश की हैं। इसमें 1942 ई. से लेकर 1952ई. तक के राजनीतिक, सामाजिक जीवन का यथार्थवादी चित्रण किया गया है। विभाजन के पूर्व पंजाब की स्थिति वहां का जनमानस का मानसिक गठन, निम्नमध्यवर्गीय जीवन की अव्यवस्था, राजनीतिक दाव पेच, साम्प्रदायिक संकीर्णता और तनाव, देश का विभाजन, भीषण नरसंहार, विस्थापितों की दुर्दशा, उच्च वर्ग की सार्थकता, मध्य वर्ग की नैराश्य सब कुछ इसमे यथार्थ रूप में चित्रित हुआ है।

भीष्म साहनी ने झरोखे में आर्य समाजी संस्कारों वाले मध्यवर्गीय परिवार में घटित छोटी-छोटी घटनाओं को स्मृति चित्र के रूप में संजोया है। वहीं कड़िया में विपरीत संस्कारों वाले मध्यवर्गीय पति पत्नी की जीवन कथा कही गई है। लेखक का जोर इस बात पर है कि पुराने संस्कारों वाली पत्नी या जो अपने संस्कारों के अनुकूल नहीं है। उसके साथ बोझिल, नीरज, उबभरा और जकड़ा हुआ जीवन व्यतीत करने से अच्छा हैं उससे मुक्त होकर अपने अनुकूल नारी का वरण करना। अमरकांत मूलतः कहानीकार हैं पर उपन्यास भी लिखे हैं। जिसमें सूखा पत्ता, ग्राम सेविका, आकाश पंछी, काले उजाले दिन, बीच की दीवार, इन हथियारों से इनके प्रमुख उपन्यास है। सूखा पत्ता एक प्रेम परक उपन्यास है। पर प्रेम की असफलता से वर्ग संघर्ष को जन्म देते हैं। जिससे वह समाज को बदलने का कृत संकल्प लेता है। इसी तरह के संघर्ष व प्रेम की विषमता को वे बीच की दीवार में भी अंकित किया गया है। राही मासूम रजा के उपन्यासों में आधा गांव इनका पहला व चर्चित उपन्यास है। जो मूलतः विभाजन की त्रासदी पर केंद्रित है पर कथावस्तु गंगोली के मध्य वर्गीय चेतना कि उसकी महत्वाकांक्षा सांप्रदायिकता उसका पतन सब जीवंत हो उठा है। कटरा बी आर्जू में इलाहाबाद के एक मोहल्ले कटरा भी आरजू में रहने वाले मध्यवर्गीय व मजदूर वर्ग के गरीब परिवारों की कहानी कही गई है। जगदंबा प्रसाद दीक्षित के तीन उपन्यास कटा हुआ आसमान, मुर्दाघर, और अकाल प्रकाशित हैं। कटा हुआ आसमान मुंबई में सेवारत अध्यापकों की यथार्थ स्थित का चित्र अंकित है। इसमें उनके असंतोषजनक सेवा शर्त आर्थिक तंगी विद्यालय की चालाकीयों व कारखानों में घुटते मजदूर होटलों में विलासमय जीवन खोखली तड़क-भड़क मध्यवर्गीय जीवन की समस्या के साथ साथ सामान्य जन की समस्याएं है।

आंचलिक उपन्यासों में मध्यवर्ग

आंचलिक उपन्यासकारों में फणीश्वर नाथ रेणु, नागार्जुन, रामदरश मिश्र, शिवप्रसाद सिंह, श्रीलाल शुक्ल, शैलेश मटियानी, भीष्म साहनी, भगवानदास मोरवाल, इत्यादि मुख्य हैं। 'रेणु' को हिंदी का सर्वश्रेष्ठ आंचलिक उपन्यासकार के साथ प्रथम आंचलिक उपन्यासकार भी माना जाता है। तथा इनका पहला उपन्यास मैला आंचल 1954 में पूरी तरह से ग्रामीण तथा आंचलिक परिवेश को समेटे हुए अंचल की सामाजिक चेतना को बेहतरीन व्याख्या करता है। इसी कारण इसे प्रथम आंचलिक उपन्यास भी माना जाता है। रामदरश मिश्र एक श्रेष्ठ उपन्यासकार हैं। इनका पानी के प्राचीर हुआ टूटता हुआ जल अत्यंत लोकप्रिय उपन्यास है। जिसमें ग्रामीण चेतना के साथ संघर्ष, याताना वर्ग चेतना सब कुछ बखूबी चित्रित हैं। शिवप्रसाद सिंह का अलग-अलग बैतरणी में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद गांव में आने वाले बदलाव का संश्लिष्ट चित्र खींचा है। जमीदारी उन्मूलन के साथ गांव के जीवन में बदलाव आना स्वाभाविक था। लेकिन यह बदलाव पुराने मूल्यों को तोड़कर एक तरह की रिक्तता छोड़ जाता है। नये मूल्य उस रिक्तता को भर नहीं पाते हैं। ऐसा नहीं है कि गांव में मूल्य दृष्टि वाले पात्रों का नितांत अभाव है। इसमें ग्रामीण सामाजिक चेतना व मध्यवर्गीय विसंगतियां, जीवन यथार्थ की कुरुपता, मानवीय संवेदना व मूल्य सब के सब बिखरे हुए मिलते हैं। इस प्रकार से यह सब के सब सारे उपन्यास मध्यवर्ग की जो जिंदगी बिखरी पड़ी है। उसके जो संघर्ष हैं बेबाक ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

आधुनिकता के भावबोध पर लिखे गए मध्यवर्गीय उपन्यास

आधुनिकता के आधार पर कई स्तरों पर उपन्यासों का सृजन किया गया है। जिसका वर्गीकरण बहुत ही जटील है। क्योंकि आधुनिकता बोध स्वयं में एक जटिल अवधारणा है। इसी कारण प्रगतिशील और मूल्यवादी विचारक इसे मानवता के भविष्य निर्माण के संघर्ष में बाधक मानते हैं । आधुनिक यंत्र दबाव के समक्ष अपनी हीनता और व्यसर्थता के बोध से आक्रांत मनुष्य बेहतर जीवन निर्माण के लिए संघर्ष नहीं कर सकता। इसलिए विसंगतियां, विडंबना, व्यर्थता, अजनवीपन, नैराश्य, कुंठा, संत्रास आदि जीवन में गहराई से व्याप्त है। इन्हीं के इर्द-गिर्द इस कालखंड के उपन्यासों को रचा गया है। इसी भौतिकता, विलासिता, यांत्रिकता आदि में आज की मध्यवर्गीय जिन्दगी उलझकर रह गई हैं। इस खंड के प्रमुख उपन्यासकार निम्न है:- नरेश मेहता, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, राजेंद्र यादव, निर्मल वर्मा, राजकमल चौधरी, कमलेश्वर, महेंद्र भल्ला, गिरिराज किशोर, रविंद्र कालिया इत्यादि प्रमुख हैं। नरेश मेहता एक महत्वपूर्ण उपन्यासकार है। डूबते मस्तूल, यह पथ बन्धु था जो आधुनिक परिवेश में मध्यवर्गीय समस्याओं व सामाजिक चेतना पर केंद्रित है। डूबते मस्तूल में

रंजना के माध्यम से मध्यवर्गीय नारी की समस्या का चित्रण किया गया है। रंजना के जीवन में कई पुरुष आते हैं। किंतु कोई भी उसकी आत्मा के सौंदर्य को नहीं देखला। अंत में वह जीवन से हारकर आत्महत्या कर लेती है। यह मृत्यु बोध आधुनिकता का ही एक पक्ष हैं। यह पथ बंध था में एक आदर्शवादी संस्कार सम्मत दंपत्ति श्रीधर और सरो के जीवन संघर्ष की करुण कहानी कही गई है। श्रीधर जिन मूल्यों को लेकर स्वतंत्रता संग्राम में संघर्ष करता है अंत में निरर्थक प्रमाणिक होते हैं। उनका पूरा परिवार टूट जाता है। और वह अपने को व्यर्थ अनुभव करता है। व्यर्थता बोध भी आधुनिकता की ही उपज है। अचानक से चीजो का बदलत जाना, अनुभूतियों का बदल जाना, यही आधुनिकता है।

मोहन राकेश तीन उपन्यास लिखे अंधेरे बंद कमरे, न आने वाला कल, और अंतराल लिखे हैं। अंधेरे बंद कमरे में दिल्ली के मध्यवर्गीय हरवंश और नीलिमा के दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों का चित्रण है। हरवंश और नीलीमा के दाम्पत्य जीवन के बंधन में बंधे हैं। दोनों अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास चाहते हैं इस क्रम में परस्पर सहयोग भी करते हैं और ईर्ष्या भी। दोनों असहय घुटन का अनुभव करते हुए ना ठीक से जुड़ पाते हैं ना टूट पाते हैं। दोनों जीवन के अंधेरे बंद कमरे में झटपटते रहते हैं।

राजेंद्र यादव का प्रेत बोलते हैं, उखड़े हुए लोग, कुल्टा, शह और मात, एक इंच मुस्कान, अनदेखे अनजाने पुल। प्रेत बोलते हैं उपन्यास में मध्यवर्गीय जीवन के जड़ संस्कारों से आबद्ध 'समर' के माध्यम से पूरे समाज की जड़ता का चित्रण किया गया है। अतीत के मोह से ग्रस्त कातर और समाज भीरु 'समर' पूरे मध्य वर्ग का सामाजिक नैतिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है। कुल्टा में भी राजेंद्र ने मानव मन की पर्तो को सूक्ष्मता से खोलते है, उसके भीतर जाते हैं। उसमें बाहरी दबाव और प्रतिक्रियाओं की छाया देखते हैं। और मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों का यथार्थ अंकित करते हैं। निर्मल वर्मा आधुनिकतावादी विचारों से निर्मित श्रेष्ठ उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यासों में वे दिन, लाल टीन की छत, एक चिथड़ा सुख, रात का रिपोर्टर, अंतिम अरण्य मुख्य हैं। इनके उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन की जो आधुनिकता से पैदा हुई विसंगतियां हैं। जैसे अकेलेपन, संत्रास, उदासी, तनाव, अनिश्चयतता आदि विद्यमान है। कुछ और प्रमुख उपन्यास जैसे महेंद्र भल्ला का एक पति के नोट्स, गिरिराज किशोर का तीसरी सत्ता मंजूर एहतेशाम दास्तान ए लापता, कमलाकांत त्रिपाठी का पाहघर, विभूति नारायण राय का घर और कुछ प्रमुख स्त्री लेखिकाओं का जैसे मन्नू भंडारी का आपका बंटी, उषा प्रियंवदा पचपन खंभे लाल दीवारें, ममता कालिया का नरक दर नरक, कमल कुमार

का हैम बरगर, नासिरा शर्मा का ठिकरे की मगनी, मैत्रेयी पुष्पा का इदन्नम्, अनामिका का तिनके तिनके पास मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन के अंतर्विरोध और पुरुष प्रधान समाज में अपनी पहचान के लिए संघर्षरत नारी जीवन की त्रासद स्थितियों के दायरे से बाहर अब महिला उपन्यासकार जीवन के अनेक आयामों का विश्लेषण करने में लगी हुई है। कमलेश्वर पुराने नैतिक आदर्शों वाले और आधुनिक व्यवहार मूल्यों की टकराहट से उत्पन्न तनाव का यथार्थ चित्रण अंकित करने वाले कमलेश्वर आधुनिकता वादी चेतना से युक्त एक श्रेष्ठ साहित्यकार है। उनके उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन की सामाजिक चेतना वह विसंगतियां बड़ी गहराई व तल्खी के साथ विद्यमान हैं। जिसका चर्चा यहां विस्तार से करेगी।

कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन का सामाजिक पक्ष

कमलेश्वर का लेखन व चिंतन स्वतंत्र भारत की विसंगतियों, यथार्थस्थितियों, बदलते जीवन मूल्यों, विघटित परिवारों, टूटते रिश्तों, विखरते विश्वास, स्वार्थपरता व भौतिकतावादी स्थितियों का लेखन व चिंतन है। तथा इन जमीनी हकीकतों का निरुपण कमलेश्वर की संपूर्ण लेखन में स्पष्ट है। समाज व सामाजिकता की उनकी स्पष्ट दृष्टि है। शोषित, वंचितों व निर्धनों के प्रति उनकी सहज व सरल प्रवृत्ति लगातार बनी हुई है। कमलेश्वर ने साहित्य का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "साहित्य का यह भी एक महत् उद्देश्य रहा है कि वह मनुष्य की धारणाओं विश्वासों को बल दे और जो कुछ धर्म दर्शन इतिहास ने बताया या तय किया है उसका अनुमोदन करें, ताकि समाज व्यवस्थित और संगठित रहें समाज का व्यक्ति संस्कारों से संपन्न रहें।"22 यह जो दृष्टिकोण है कि साहित्य हमेशा मनुष्य की धारणाओं और विश्वासों को बल दे यह कमलेश्वर में मजबूती से विद्यमान है। यह प्रेमचंद के साहित्य के उद्देश्य से भी आगे का उद्देश्य है। वे साहित्य को निरंतर प्रगतिवादी व समाजवादी धारणाओं से जोड़ के रखते है। जो कुछ भी मनुष्य की जीवन में संगठित और असंगठित, अच्छा-बुरा, धर्म-दर्शन, इतिहास व जीवन-दर्शन है। सब पर दृष्टि रखते हुए मनुष्यता की खोज व उसकी रक्षा में उनका लेखन लगातार मजबूत होकर आगे आता रहा।

कमलेश्वर के उपन्यासों की पृष्ठभूमि सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक होते हुए मनुष्यता की पृष्ठभूमि का निर्माण करती हुई उसके उत्थान का मार्ग प्रशस्त करती है। कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन का सामाजिक पक्ष के साथ-साथ उसकी स्थितियां-परिस्थितियां, जीवन संघर्ष, सामाजिक संघर्ष, राजनीतिक संघर्ष, सांस्कृतिक संघर्ष, आर्थिक संघर्ष और किसी अन्य स्तर पर

जो संघर्ष है उसकी जो लड़ाई है, वही उसका आधार है। एक बात और की कमलेश्वर के उपन्यासों की सामान्य पृष्ठभूमि जो हैं, वह स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के भारत के एक बड़े वर्ग की समस्याएं हैं। या उसके सामने जो एक टूटती हुई उसकी उम्मीदें हैं, बिखरा हुआ या अंधेरे में उसका भविष्य है या मनुष्यता का गिरता हुआ जो ग्राफ उसको उन्होंने बखूबी पकड़ा है। और जो पीड़ा, संत्रास और उसकी बेचैनी, छटपटाहट उनके साहित्य में व्यक्त हुआ है, वह बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाला हैं। इस प्रकार से यदि हम देखे तो उनके उपन्यासों में जो यत्र-तत्र सर्वत्र विसंगतियां या समस्याएं विद्यमान हैं। वे कोई काल्पनिक या अदृश्य जगत की कल्पना नहीं है। बल्कि हमारे आसपास, हमारे परिवेश, हमारे बीच में ही टूटते एवं निर्मित होते रहने की जीवंत समस्याएं हैं। उसका हम क्रमिक अध्ययन करेगें जो इस तरह से है-

संयुक्त परिवार का विघटन

परिवार समाज का सबसे महत्वपूर्ण संस्थान है। इसके बिना समाज की संकल्पना असंभव है। "सामाजिक संगठन के रूप में परिवार वह मूलभूत संगठन है, जो सामाजिक गुणों का पालना कहा जाता है।"23 संयुक्त परिवार प्रथा प्रारंभ से ही भारतीय समाज व्यवस्था का प्रमुख आधार रही है। संयुक्त परिवार में सब सदस्यों को आपस में सामंजस्य के साथ एक सामाजिक भावना, समर्पण, त्याग, व प्रेम के साथ जीना होता है। सभी सदस्यों में मानवीयता पर अधिष्ठित सहिष्णुता, अनुशासन और संयम के भाव विद्यमान होते है। लेकिन जैसे-जैसे समय बदलता गया वैसे-वैसे यह भावना विखंडित होती गई। और संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार ने जगह लेनी शुरू कर दी। कमलेश्वर ने भारतीय समाज के संयुक्त परिवार की शानदार परंपरा या एकल परिवार का सहज चित्रण अपने लगभग सभी उपन्यासों में किया है। संयुक्त परिवार में सबसे बड़े मुखिया की छत्रछाया में ही परिवार के सारे विधान चलते हैं। परिवार का प्रत्येक सदस्य उनका सम्मान ही नहीं करता बल्कि उसकी प्रत्येक आज्ञा का पालन भी श्रद्धापूर्वक करता है। परिवार के सदस्यों का अपना अलग-अलग व्यक्तित्व था। परंतु वे सभी व्यक्ति एक ही घर व परिवार के लिए अर्पित रहते हैं। तीसरा आदमी उपन्यास में नरेश संयुक्त परिवार कि संयुक्तता को जिस रूप समझ रहा है, यही संयुक्त परिवार स्वरूप था। वह कहता है- "हम सब मिलकर एक घर बनाए हुए थे या एक घर था जो हम सबको बड़ी गहराई से बांधा हुआ था जो कुछ होता था वह इसी घर के लिए..।"24 संयुक्त परिवार में दादा-दादी, नाना-नानी, चाचा चाची, ताऊ आदि परंपराओं के सृजक और रक्षक होते हैं। जिनके पास एक लंबा अनुभव, व्यापक जीवन दृष्टि और गहरी सोच होती है। जिनके आधार पर

भावी पीढ़ी का गठन करते हैं। कमलेश्वर के सुबह दोपहर शाम में इस पूजनीय परंपरा का चित्रण सजीव और मार्मिक है। यहां कमलेश्वर ने संयुक्त परिवार का समर्थन किया है।

कमलेश्वर ने कहीं-कही अपने उपन्यासों में संयुक्त परिवार प्रथा का दोष भी प्रकट करते है। समय परिवर्तन के साथ-साथ प्राचीन संयुक्त परिवार व्यवस्था आधुनिक युग के आधुनिक परिवेश में दम तोड़ रही है। संयुक्त परिवार आज एकल परिवार में परिवर्तित हो रहे हैं। अतः कमलेश्वर में अपने उपन्यासों में यह भी दर्शाया है कि आज संयुक्त परिवार कैसे धीरे-धीरे टूटते जा रहे हैं, और इस विघटन में सामूहिकता के बदले व्यक्तिवादी दृष्टिकोण कैसे उभर रहा है। इस मूल्य संक्रमण के कारण पारिवारिक संबंधों की संकल्पना कैसे कमजोर हो गई है।

स्वतंत्रता के पश्चात सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ। सामाजिक व्यवस्था पर राजनीतिक जोड़-तोड़, नवीन बौद्धिक चेतना, पाश्चात्य शिक्षा, सभ्यता और संस्कृति, नारी शिक्षा और जागरण इत्यादि के कारण बेरोजगारी और व्यक्ति स्वतंत्रता पर जोर पड़ा जिसके कारण पारिवारिक संगठन एवं मूल्यों में दरार आने लगी। अधिकांशत रोजगार और काम धंधे के कारण संयुक्त परिवार की परंपरा टूटी और एकाकी परिवार का जन्म होता है। जिससे पारिवारिक तथा सामाजिक संबंधों में शिथिलता आयीं। कमलेश्वर का उपन्यास सुबह दोपहर शाम में ऐसी ही स्थित का चित्रण है। उपन्यास में तीन टुकड़े तो संतो के घर के भी हो गए। जिससे दादी सबसे अधिक खिन्न हैं।

संयुक्त परिवार में विघटन का एक मुख्य कारण व्यक्ति स्वतंत्रता की जीत, और रोजी-रोटी की तलाश है। तीसरा आदमी में नवविवाहित नरेश ने सोचा कि संयुक्त परिवार में रहते हुए पति-पत्नी में आत्मीयता का निर्माण नहीं होता। यहीं सोचकर वह दिल्ली में आकर रहने लगता हैं। जहाँ उसकी कस्बाई महत्वाकांक्षाओं की मूर्ति लगातार टूटती जा रही थी। यहां नरेश को संयुक्त परिवार टूटने की गहरी पीड़ा महसूस हो रही है। और एकल परिवार में भी छटपटा रहा है। और वह कहता है- "परिवार इतने छोटे-छोटे टुकड़ों में बट गए हैं, कि आदमी की खुशियां या दुखों का विस्तार सिमट आया है....अब सुख में दस या दुख में बीस जन संवेदना प्रकट करने वाले नहीं रहे। इसलिए अन्य सुखो और दुखों की सहानुभूति के लिए दस या बीस गुनी का लड़ाई चाहिए।"25 यहां संयुक्त परिवार की टूटन की त्रासदी बहुत ही कारुणिक है।

संयुक्त परिवार की अपेक्षा एकल परिवार में भी दांपत्य संबंधों में दरार होने का परिवेश अधिक सक्रिय हो उठता है। शायद एकल परिवार के मुक्त वातावरण में पति-पत्नी में मधुरता का अनुभव

किया होगा। किंतु बड़ों के अनुशासन उपदेश और स्नेह वात्सल्य के अभाव तथा पति की व्यस्तता के कारण पति-पत्नी में अकेलापन व नीरसता का एहसास होता है। कमलेश्वर के तीसरा आदमी और वही बात उपन्यासों में ऐसी परिस्थितियों का वर्णन है। यहां पति की अत्यधिक व्यस्तता के कारण पत्नी के जीवन में तन्हाई व नीरसता का दमघोटू अनुभव होता है। जिसके कारण एकाकी परिवार भी टूट कर बिखर जा रहे हैं।

संयुक्त परिवार की टूटन से बच्चों को भी बहुत ही कष्ट उठाना पड़ता है। संयुक्त परिवार में उनकी देखभाल करने के लिए, कहानी सुनाने के लिए, लोरिया गाकर सुलाने के लिए दादा-दादी, नाना-नानी चाचा-चाची सब होते हैं। आज बच्चे उनके मुंह से कहानियां सुनने के लिए तरसते रहते हैं। किंतु वहां कहानी सुनाने तथा हामी भरने को भी कोई नहीं होता। सुबह दोपहर शाम के बच्ची को भी यही दुख हैं- "दिन भी बहुत लंबे हो गए थे और रातें भी। ना कोई कहानी सुनाने वाला था, ना कोई हामी भरने वाला था। बड़ी दादी जब कहानी सुनाती थी, तब लगातार हामी भरवाती थी।"26 एकाकी परिवार में संबंधों का दायरा भी सीमित है। हर कहीं केवल औपचारिकता ही कायम है, आत्मीयता गायब है। प्रायः स्वार्थ पूर्ति के लिए ही एक दूसरे के पास आना-जाना होता है। सुख-दुख का लेना देना ख़त्म सा हो गया है।

संक्षेप में नवीन युग चेतना ने संयुक्त परिवार में विघटन पैदा कर व्यक्तित्व के जीवन संबंधों में अराजकता फैला दी तो वहां सामाजिक जीवन का ढांचा भी डगमगा उठा हैं। मानवीय जीवन पर अर्थ का स्वार्थ और व्यक्ति स्वतंत्रता का मोह हावी होकर बहुत सारे आदमी संबंधों को बेमानी या बेमतलब का बोझ हैं। फलस्वरूप समकालीन जीवन के सामाजिक और पारिवारिक संबंधों में इतनी दरारें पड़ गई। जिनको पाटना दुश्वार सा दिखाई देने लगा। कमलेश्वर ने संयुक्त परिवार की अपेक्षा एकल परिवार का चित्रण अपने उपन्यासों में अधिक सजीव रूप से किया है। किंतु संयुक्त परिवार के टूटन से एकल परिवार को जिन-जिन समस्याओं से जूझना पड़ता है। उनका भी सशक्त चित्रण इनके उपन्यासों में हैं।

दांपत्य जीवन में अलगाव

दांपत्य जीवन सृष्टि निर्माण व सृष्टि के विकास का केनरा है। दांपत्य जीवन पारिवारिक जीवन का मूल आधार है। यह एक सामाजिक व्यवस्था है। परिवार समाज की धुरी है। अगर परिवार विखरता है तो न सिर्फ परिवार विखरता है उसके साथ कई तरह की पारिवारिक व सामाजिक

समस्याएं भी पैदा होती है। परिवार पति-पत्नी की स्थाई समिति है भले ही उसमें बच्चे हो अथवा ना हो। परिवार में पति-पत्नी दोनों का बराबर महत्व है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। साथ ही जीवन रथ के दो पहिए हैं। एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व संभव ही नहीं है। किंतु पुरुष अथवा स्त्री पथभ्रष्ट हो जाए तो दोनों ही बिखर जाते हैं।

दांपत्य जीवन स्थिर जीवन के लिए बनाई गई संस्था है। लेकिन आज के बदलते समय में जैसे सब कुछ बदल रहा है उसी तरह से हमारे संबंध भी बदल रहे है। बनी बनाई धरणाएं टूट रही है। अब व्यक्ति विकल्प की तलाश कर लेता है। जिससे इस दांपत्य जीवन में एक तरह की हलचल हुई है। किंतु इसका दूसरा पहलू भी है आज पति पत्नी का संबंध इस विस्फोटक स्थिति तक पहुंच गये है कि इसमें किसकी कितनी भूमिका है, किसका कितना सहयोग है, या दोष है। यह संबंध कितना उचित या अनुचित है यह विचारणीय है- "दांपत्य जीवन की टूटन तथा बिखराव का कारण नारी की आर्थिक निर्भरता, समान अधिकार की भावना या उसकी अतिवादी विचारधारा ही नहीं है। वरन् नारी के प्रति पुरुष का अहम, गलतफहमी, तीसरे पुरुष का आगमन और मुक्त यौन संबंधों के पीछे भागने की प्रकृति है।"27 स्त्री-पुरुष के संबंधों में आई जटिलता और तनाव का का चित्रण भी इनके उपन्यासों में है।

कमलेश्वर के डाकबंगला उपन्यास में इरा और कलाकार विमल ने खुद एक साथ जीवन जीने का चयन करते है। जिसमें परिवार के किसी सदस्य का कोई स्थान नहीं है। परिवार के द्वारा मना करने पर आगे बढ़कर स्वयं से चुनने की बात है। लेकिन फिर भी संबंधों में ठहराव नहीं है। और दूसरी तरफ पिता की मर्जी के खिलाफ व्यवहार करने के कारण इरा का पिता से संबंध व सम्पर्क सब कुछ टूट गया। इरा के लिए विवाह दो आत्माओं का पवित्र मिलन या जन्म जन्मांतर का संबंध नहीं केवल मैत्री संबंध या समझौता मात्र रह गया। इरा का विवाह संबंधी दृष्टिकोण है- "शादी से आत्मा का कोई संबंध नहीं नहीं है। अगर आत्मिक मिलन की बात होती तो शादियां करने की उम्र पचास के बाद होती। यह महज एक शारीरिक आवश्यकता है। जिसे आदर्श का ताज पहनाकर गरिमा प्रदान की गई है....आध्यात्मिक मिलन की बात पैंसठ के बाद की जाती।"28 यह एक बदली हुई धारणा है। और इस आधार पर आज बहुत से लोग अपने जीवन को जी भी रहे, पर उसमें इरा के जीवन की भांति कोई स्थिरता नहीं है। उनकी जिंदगी डाक बंगले की जिंदगी हो कर रह जाती है। यह इस नई व्यवस्था की विसंगति भी है। यह मध्यवर्गीय व्यक्ति की सबसे बड़ी समस्या है

और समाज की बड़ी विसंगति भी है। लेखक का ध्यान इस समसामयिक समस्या पर गया है। जो महानगरीय जीवन में दिनोंदिन गंभीर समस्या की ओर बढ़ती हुई नजर आ रही है।

इरा और विमल दोनों आपस में बहुत प्यार करते थे। काफी अच्छी तरह समझते और साथ मिलकर भविष्य के सपने रचते और जिंदगी भर एक साथ जीने मरने की कसमें भी खाते हैं। किंतु उनका आत्मविश्वास धीरे-धीरे ठंडा पड़ने लगा, आर्थिक विपन्नता के कारण वे एक अस्थाई रंगमंच नहीं स्थापित कर सकें। आर्थिक अभाव और बेरोजगारी उनके संबंधों को कमजोर करने लगती। विमल आर्थिक गुत्थी सुलझाने के लिए इरा को महेंद्र बत्रा दलाल के यहां नौकरी दिलवा देता है। किंतु विमल खुद मजबूर था। दिन पर दिन उसका मन संकालु होता गया। विमल इरा पर एकाधिकार चाहता था। अपनी घुटन और आर्थिक अभाव के कारण उसके दिल दिमाग पर इरा शंका का विश्वास गहरा होता जाता हैं। और वह अंदर ही अंदर टूटता जा रहा था। इरा के शब्दों में- "विश्वास के वे क्षण भी उसके पास भी कम होते जा रहे थे। वह खुद मजबूर था।....विमल जैसा आंख मूंदकर बात मान लेने वाला आदमी अब खुली आंखों से देखते हुए भी किसी बात पर एकदम विश्वास करने को तैयार नहीं होता था।"29 इसी द्वन्द्व के बीच आखिरकार एक दिन वह ईरा को इस अनजाने संसार के मझधार में छोड़कर अपनी जिम्मेदारियों को भूल कर सहजीवन की पवित्र संबंध को तोड़कर इरा से दूर हो जाता है।

विमल व बतरा के बाद इरा डॉ. से विवाह कर लेती है। डॉ. के साथ इरा को आर्थिक मजबूरीवश प्रौढ़ डॉ. से विवाह करना पड़ा। इरा कि शारीरिक और मानसिक तृप्ति डा. के द्वारा नहीं होती हैं। इरा को कुरुप डॉक्टर से घृणा का भाव रहता है। किंतु वह पति होने का अधिकार थोप कर हर बार उसके शरीर को नोचा कराता। इस पर इरा कहती हैं- "उसे सताकर भी मैं चैन नहीं पाती थी और वह भी मुझे कम नहीं सतता रहा था। मेरे लिए वहां रहना मुश्किल होता जा रहा था। जैसे-जैसे शाम आती मेरा मन घबराने लगता था।...एक-एक आवाज पर मेरा मन रोता था, अंग-अंग से दुःख के स्वर फूटते थे। मैं तपती रेत के दलदल में फंसी हुई थी। मेरा सब कुछ झुलसा जा रहा था। मेरी आत्मा मर गई थी। बावजूद अपनी हारो और निराशाओं के कारण जो कुछ मैं नहीं थी, वह बनती जा रही थी।"30 इरा इस बर्बर दंपति जीवन से ऊब जाती है, और हार कर अपनी सहेली दमयंती के पास नागपुर चली जाती है।

आगामी अतीत में कमलबोस और उसकी पत्नी का रिश्ता एक संबंध से बढ़कर महज एक सौदा हैं। विवाह जैसे पवित्र संबंधों को भी कुछ वर्ग ने व्यापार बना दिया है। चंद्रमोहन जो एक अमीर उद्योगपति था। अपने मानसी केमिकल्स को अच्छी तरह चलाने के लिए होनहार युवक कमल बोस को ढूंढ लेता है। और ऊंचे ऊंचे ख्वाब दिखाकर अपनी बेटी निरुपमा से उसकी शादी करा देता है। "अब मानसी केमिकल्स का सारा कारोबार मिस्टर कमल देखेंगे। यह कंपनी मेरी तरफ से कमल बोस और निरूपमा की शादी की सौगात है।"31 निरूपमा अमीरी से बिगड़ी हुई लड़की थी। हमेशा धन ही उसके सिर पर हावी रहता था। वह धन की भाषा में संवेदनहीन होकर पति से बातें करती थी। अच्छा और बुरा, गलत और सही के पैमानों को लेकर कमलबोस और निरूपमा के बीच इतना फर्क होगा। यह कमलबोस ने कभी नहीं सोचा था। निरुपमा का चरित्र वह समझ नहीं पा रहा था- " बहुत बार कमल बोस ने अपने को टटोला...की देखें यह दोष कहां पर है...पर समझ ना पाया। सिवा इसके कि यह भेद आदमी आदमी के पैमानों का नहीं...यह चरित्र दोष आदमी के माहौल का हैं।"32

कमलेश्वर के तीसरा आदमी उपन्यास में एक निम्न मध्यवर्गीय युवक नरेश की हताशाओं और कुंठाओं और अटूट संदेहवृत्ति से सफल बने दांपत्य जीवन की कहानी है। आर्थिक अभाव के कारण नरेश पत्नी चित्रा दिल्ली महानगर की एक बस्ती में अपने रिश्ते के भाई सुमंत के एक छोटे से कमरे में रहने को बाध्य होते हैं। अपनी लाचारी और इस तंग कमरे की परिस्थितियों की वजह से उनका वैवाहिक संबंध खोखला और अर्थहीन सा हो जाता है। उनके जीवन की गाड़ी अनमनेपन से गुजर रही है। वे विवाहित होकर भी अविवाहित जीवन गुजार रहते हैं। नरेश कहता है- " लगता था कि जैसे कितने थोड़े से दिनों में ही हमारे बीच एक अजीब सा ठंडापन भर गया है। हम दोनों जैसे एक दूसरे के साथ यह विवाहित जीवन जीने के लिए कुछ कुछ मजबूर थे और कुछ मजबूरी थी हमारे जवान होने की। जैसे हमें एक दूसरे की जरूरत कुछ क्षणों के लिए थी...और वे छोड़ भी अजीब उफान के होते थे उसके बाद सूनापन बांधने लगता है।"33

नरेश का संदेही मन सुमंत और चित्रा के मध्य आकर्षक के लक्षण अनुभव करता है। दिन पर दिन दोनों के बीच असंतुलित होते संबंध तथा खामोशी बढ़ती जाती है। नरेश विवाह के दिन से ही अनुभव करता है कि सुमंत उसके वैवाहिक जीवन पर एक काली छाया की भार्ति है। आज नरेश को ऐसा लगता है कि अब चित्रा की उसकी जरूरत नहीं रह गई। सुमंत के रूप में एक तीसरा आदमी उन दोनों के जीवन में प्रवेश पा जाता है। उसका अधिकार बहुत अधिक हो जाता है। और

फिर उस मन मस्तिष्क में वही छाया रहता है। नरेश सोचता है-"मैंने उस दिन बहुत गहराई से अनुभव किया था कि सचमुच एक तीसरा आदमी हमारे बीच कहीं उपस्थित है। हर बात उसी पर ढलती है। हर संशय वही इशारा करती है और हमारे बीच हर बार वही एक छाया आकर खड़ी हो जाती है, जिसे हम खुली आंखों से देखते हैं और कुछ नहीं कह पाते।"34 चित्रा पति की अनुपस्थिति में खुल्लम खुल्ला सुमंत के साथ घूमती है। वैवाहिक इच्छाओं की पूर्ति में संलग्न व्यक्ति कितना भद्दा और बेहूदा लगता है। शायद इसलिए और भी ज्यादा की विवाह का यह परंपरागत स्वरूप नष्ट हो चुका है, उसकी सामाजिक अपेक्षाएं बदल गई।

आज पति-पत्नी का परंपरागत रिश्ता टूटता जा रहा है। आज शादी में इस बात कोई गारंटी नहीं है कि अंतिम सांस तक पति-पत्नी का रिश्ता स्थाई रहेगा। आज पति-पत्नी के अस्थाई रिश्ते को कमलेश्वर ने नरेश के माध्यम से व्यक्त किया है- "यह रिश्ता तो सिर्फ रहम का रह गया हैं। इसके अलावा और क्या है ? नारी पुरुष पर रहम करके उसकी वासना की तृप्ति के लिए अपना शरीर दे देती है और पुरुष उस पर रहम करके उसे सुरक्षा प्रदान कर देता है। अंततः यह रहम ही दोनों को जोड़ें रहता है। जहां यह रहम नहीं रह जाता वहां सब कुछ टूट जाता है।"35 विकल नरेश का मन शक की परिधि में आकर अपनी पत्नी को छोड़ बार-बार पलायन करता है। पुरुष कई बार केवल शक करके ऐसी विकट परिस्थितियों में स्वयं को धकेल देता है, पश्चाताप ही शेष रह जाता है। इसका परिणाम यही है कि जब भी पति-पत्नी के बीच कोई तीसरा आएगा तो पति-पत्नी दूर-दूर तक ही रह जायेंगे फिर जीवन भर भटकते ही रहना उसकी नियत होगी। पति के रहते पर पुरुष की ओर आकर्षण या पत्नी के रहते पर नारी की ओर खींचाव नैतिक दृष्टि से हेय माना जाता है। "ऐसे संबंधों के आधार में कहीं आर्थिक दशा होती है, तो कहीं बेबसी, लाचारी या फिर नशा।"36 ऐसी स्थित कमलेश्वर की वही बात में पाई जाती है। प्रशांत धन कमाने के लिए पत्नी को भी भूल कर दिन भर कार्यालय में लगा रहता है। उसकी दृष्टि में सफलता के बगैर जिंदगी का कोई मतलब ही नहीं। पति की इसी व्यस्तता ने समीरा के मन में कुंठा भर दी- "समीरा क्या कर रही हो?...बैठी हूँ। समीरा का वही जवाब.....में बजे तक आ जाऊंगा....फिर....फिर वही..वही बात, उसी तरह। दूसरा दिन...तीसरा दिन...चौथा दिन...उसी तरह पांचवा दिन...फोन की घंटी बजी।"37 यह रिक्तता प्रशांत व समीरा को खोखलाकर दोनों को अलग कर देती हैं।

पारिवारिक तनाव पति की उपेक्षा, असंतोष तथा निरंतर अकेलेपन से सताई गई समीरा खाली वक्त गुजारने के लिए, अपने खोए हुए प्यार व सम्मान को पुनः प्राप्त के लिए घर की चाहरदीवारी से

बाहर निकलती है। शनै शनै घर से अलगाव महसूस कर रही समीरा अंत में पूर्ण रूप से प्रशांत को छोड़कर नकुल के साथ रहने लगती है। "नकुल ने अपना हाथ बढ़ाया तो समीरा ने अनायास ही अपना हाथ उसके हाथ की ओर बढ़ा दिया।"38 इस प्रकार पति पत्नी संबंध धीरे-धीरे इस तरह टूटते हैं कि वह उसे एक करना मुश्किल बात है। फिर पुरुष के पास छटपटाहट ही शेष रहती है। "समीरा तुमने मुझे धोखा दिया होता तो, मैं बर्दाश्त कर लेता, पर तकलीफ इस बात की है कि तुमने मुझे तकलीफ दी है। काश ! तुम कुछ और इंतजार कर लेते....यह सब में तुम्हारे लिए ही तो कर रहा था, तुमने मुझे वक्त तो दिया होता।"39 मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि पत्नी हमेशा पति का सानिध्य चाहती है, उस चाह पर ठेस लगने पर वह ठगी सी हो उठती है। वहां पुरुष को तलाक जैसी विघटन की स्थिति का सामना करना पड़ता है। प्रशांत की जिंदगी में भी वही हुआ स्पर्धा की सरपट दौड़ में भाग चले प्रशांत के लिए केवल निराशा पूर्ण स्मृतियों का भूत, घातक वर्तमान और बिगड़ता भविष्य शेष रह गया।

कमलेश्वर के पति पत्नी और वह उपन्यास में पति-पत्नी के जीवन में दरार आने का कारण पुरुष समाज का प्रभुत्व ही है। रंजीत शारदा को भूलकर ऑफिस की एक नारी से अवैध संबंध स्थापित कर लेता है। शारदा ने इसका कारण खोज निकाला वह कहती है कि "वह यह है कि वह औरत है और संजीव एक मर्द है। इस पुरुष प्रधान समाज के नियम संविधान नारी को समान अधिकार दिए जाने के बाद भी नहीं बदली है। पुरुष के समान कार्यशील और समान अधिकार प्राप्त नारी आज भी अबला है।"40

काली आंधी की उच्च शिक्षित मालती अपने पिता के विरोध में ही शिक्षित जग्गी बाबू से शादी कर लेती है। दोनों के जीवन की विडंबना यह है कि दोनों ने एक ही लक्ष्य से जीवन यात्रा आरंभ की थी। किंतु अंत में दोनों इस प्रकार भी बिछड़ गए कि मिलने की संभावना होने पर भी हमेशा के लिए अलग हो गए। जबकि जग्गी बाबू के प्रभाव से राजनीति में प्रवेश कर रही मालती पति की आशा आकांक्षाओं को तोड़ती हुई राजनीति के क्षेत्र में तूफान सी आगे बढ़ती गई। उसके जीवन की मंजिल की यात्रा में पति और बेटी की जगह ही नहीं मिली।

जग्गी बाबू का दृष्टिकोण इसका ठीक उल्टा है। उसने जिन मूल्यों और मान्यताओं को लेकर अपना जीवन बिताया, उसे वह छोड़ना नहीं चाहते। वह अपने वर्ग से प्यार करने वाला तथा जिंदगी भर अपने स्वाभिमान को बनाए रखने के लिए संघर्ष करने की इच्छुक है। जिसे राजनीति से या झूठ

और ढोंगी प्रतिष्ठा से कोई लगाव नहीं। गौर से देखने पर यह ज्ञात होगा कि मालती की सारी सफलता, महत्वाकांक्षा और स्वार्थ सिद्धि ने उसके दांपत्य संबंधों को बिल्कुल खोखला कर दिया। जिंदगी के टूटन का उल्लेख करते हुए जग्गी बाबू ने कहा- "तुम्हें अपनी बेरफ्तार दौड़ती जिंदगी में सोचने का वक्त कहाँ मिला है। मशीनी नहीं सोचती। मशीनों के लिए आदमी सोचता है और सफलता सिर्फ एक मशीन है और तुम औरत नहीं...एक सफलता बन गई हो। अब तुम्हारी मुक्ति और ज्यादा सफल होते जाने में है...और कोई रास्ता नहीं है। यह तुम्हारा एकमात्र रास्ता है।"41

मालती की जिंदगी की इस मशीनीकरण और संवेदन शून्यता हीं उसके दांपत्य संबंधों को दो विपरीत ध्रुव की ओर अलग कर दिया है। उपन्यास के अंत में दोनों दो भिन्न-भिन्न दिशाओं की ओर प्रवास करते हैं। यही उनके दांपत्य जीवन का निष्कर्ष है। कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में दांपत्य जीवन के बिखराव का जो चित्रण किया वह सजीव और सहज है। उन्होंने दांपत्य जीवन के बिखराव का उत्तरदायित्व स्त्री और पुरुष दोनों पर थोपा है। उनका विचार है कि प्रेम सहयोग और आपसी समझ बूझ से दांपत्य जीवन जहां अमृत बनता है। वहीं आपसी कलह ईर्ष्या द्वेष अस्मिता अधिनायकत्व से जहर भी बन सकता है। शिव और शक्ति, पुरुष और प्रकृति, नर और नारी के आत्मसमर्पण पूर्ण मिलन से ही विश्वमंगल संभव है। पति पत्नी संबंध बुद्धि से नहीं हृदय से संतुलित होना चाहिए। तर्क की गुंजाइश इसमें है ही नहीं पति पत्नी दोनों कंधे से कंधा मिलाकर, भावुकता बरसाकर चलने से ही दांपत्य संबंध की पवित्रता बनी रहेगी। ऐसा हो तो स्त्री पुरुष संबंध आज के विकट विस्फोटक चौराहे पर नहीं आएगा दांपत्य जीवन मंगलमय हो जाएगा यही कमलेश्वर का निष्कर्ष और विधान है।

सफलता की दौड़ में शिथिल मानवीय संबंध

आधुनिक युग की सामाजिक समस्याओं को बढ़ाने का एक मुख्य कारण है, आज के मानवीय संबंधों की अर्थ हीनता। आज हर इंसान सफलता की दौड़ में शामिल है, सफलता की होड़ में आगे बढ़ते रहने के चक्कर में जाने अनजाने अपने द्वारा बनाए गए रिश्तो की डोरी को काट देते हैं। जिससे व्यक्ति, परिवार और समाज में अनेक घातक और घृणित समस्याएं घनीभूत हो उठती हैं। कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में इन बिखरे हुए मानवीय संबंधों को दिखाने का प्रयास किया है।

कमलेश्वर के काली आधी की मालती एक साधारण घरेलू औरत थी। किंतु सफलता की प्यासी रही थी। राजनीत की काली आंधी में फंसी मालती का हौसला पति जग्गी बाबू ने बढ़ाया, पति की प्रेरणा

और सहयोग पाकर मालती निरंतर सफलता प्राप्त करती चली गई। सफलता कितनी क्रूर होती है। कितनी जालिम होती है। इसका नशा कितना गहरा होता है, और खुद अपनी सफलता में व्यक्ति कैसे कैद हो जाता है। इसका जीता जागता उदाहरण मालती है। दुख और त्याग कितना जालिम होता है। और इसमें व्यक्ति कैसे बुझ जाता है। इसका जागता हुआ उदाहरण जग्गी बाबू। जग्गी बाबू की इस उदारता का यह परिणाम हुआ कि मालती पत्नी और मा स्वरूप को भी भूल गई। उसका पारिवारिक जीवन टूटा। और बिखर गया। पति पत्नी के सम्बंधों में एक भयानक खोखलापन आ गया। अपने चातुर्य,साहस,कौशल और कुशाग्र बुद्धि के कारण सफलता के उच्च शिखर पहुंचने के अंतराल में वह अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर सकी। उसने अपनी एकमात्र बेटी लिली के बारे में भी जानने की कोशिश नहीं की डॉ वीरेंद्र सक्सेना ने ठीक ही कहा है- "मालती देवी हमारी पूंजीवादी व्यवस्था की गलत महत्वाकांक्षाओं की ही प्रतीक है। जो अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए साधनहीन सामान्यजनों को बहकाने, फुसलाने या उनका इस्तेमाल करने से परहेज नहीं करती।"42 इस भौतिकवादी युग में आदमी, आदमी ने रहकर मात्र यंत्र बन गया है। इसी यांत्रिकता के परिणाम स्वरुप वह भावनाशून्य भी हो गया तो उसमें माननीय तत्वों की कमी के कारण जीवन से पकड़ भी क्षीण हो गई। इसलिए वह निरंतर विघटित व्यक्तित्व के लिए केवल भटकन, उपापोह का यान्त्रिक सा जीवन जीने पर विवश है। राजनीति और सफलता के नशे में मालती के लिए जिंदगी पीछे रह गई और जब समय आया तो उसे अतीत की याद के अतिरिक्त कुछ शेष ना रहा।

कमलेश्वर के आगामी अतीत का कमलबोस भी सफलता की होड़ में शामिल हुआ इंसान है। कमल बहुत सामंतवादी तथा पूंजीवादी समाज के स्पर्धा मुल्क परिवेश में पढ़कर सफलता को प्राप्त करने के लिए गलत एवं घातक रास्तों को अपना लेता है। इस प्रयास में वह अपनी निजी वर्ग को ही नहीं अपने पहले प्यार मोहब्बत की बातों को भी भूल जाता है। कमलबोस एक निम्न वर्ग का उच्च शिक्षित युवक है। पच्चीस वर्ष पहले का कमलबोस एक विधवा मां का इकलौता बेटा था। वह उसे कर्ज लेकर डॉक्टरी पढ़ाने के लिए कलकता भेजती है। कमलबोस परीक्षा की जमकर तैयारी करने हेतु वापस अपने घर दार्जिलिंग जाकर रहता है। इस दौरान अकस्मात उसकी मुलाकात एक गरीब वैद्य की पुत्री चंदा से हो जाती। मां के चल बसने से यहां कमलबोस अपने को अकेला और दिशाहीन समझता है। वहीं चंदा की छोटी-छोटी और मामूली हिदायतों से नई दिशा मिल जाती है। दोनों एक दूसरे को अटूट प्रेम में बांध लेते हैं। उनमें विवाह का वादा होता है। चंदा कमलबोस को अपना शरीर अर्पण भी करती है। डॉक्टरी परीक्षा में प्रथम आने पर कमलबोस के सपनों को ऊंची उड़ान

में उसने अपना अतीत और चंदा के प्यार को भी ठुकरा दिया। अपनी आर्थिक विपन्नता को संपन्नता में बदलने के लिए कमल बोस केवल पूंजीवादी व्यक्तियों से ही समझौता करने लगा। जिंदगी में सब कुछ पाने के लिए या अपने दौलत और शोहरत के मुकाबले अपने प्रेम को कुछ भी नहीं समझता बेतहाशा जीतता जाता है।

इंसान ने सांसारिक सुखों की तलाश में अपनी इंसानियत और सांसारिक परंपरा को भी खो दिया है। सुबह दोपहर शाम उपन्यास में जसवंत पैसा कमाने के लिए अंग्रेजों की नौकरी को स्वीकार कर लेता है। जसवंत को रेल की नौकरी मिलते ही अपने ही वर्ग के लोगों और रिश्तेदारों के अस्तित्व को भी नहीं मानता। उसका शरीर और दिमाग रेल के पूर्जे की तरह काम करता है। इस आडंबर पूर्ण जिंदगी की खोज में उसने बहुत कुछ खो दिया। उसके ही शब्दों में यदि सत्य निखर उठता है- "शरीर में जो मिट्टी की गर्मी समाई रहती थी वह लोहे की ठंडक में कैसे बदल गई...अब पटरी पर फैला खून देखकर मन सहमत नहीं...और अब अपना आदमी अपना आदमी नहीं लगता...कुछ और ही मालूम लगने लगा है और यह रेलगाड़ी बहुत बड़ी और जरूरी लगती है।"43 जसवंत आधुनिक का प्रतीक है। जो पैसे की खातिर खून के रिश्तो को भी भूल कर किसी की भी गुलामी करने को तैयार है। यह आज की विडंबना भी है इसलिए अपने दादा के बलिदान और दादी की अटल देश प्रेम की कोई इज्जत ना रखकर अंग्रेजों की नौकरी स्वीकार कर लेता है। वह अपनी बेटी सांता के ससुराल वालों से कोई संबंध भी नहीं रखना चाहता क्योंकि सांता का देवर अंग्रेजों के विरुद्ध एक क्रांतिकारी है। अंग्रेजों को शायद इस रिश्ते का पता मिलने पर जसवंत को ऊंचे ओहदे से हटा दिया जाएगा। यहां यह सत्य है कि सफलता की होड़ में शामिल हुए इंसान के सामने रिश्तों को बटोरने की डोर कमजोर से दिखलाई पड़ती है।

विवाह के प्राचीन संस्कारों का लोप

स्वतंत्र भारतीय परिवेश के जीवन मूल्यों में सर्वाधिक परिवर्तन लक्षित होता है। प्रगति, प्रेम और विवाह संबंधों के क्षेत्र में पश्चिमी सभ्यता, नारी शिक्षा, सहशिक्षा, औद्योगिकरण, नगरीय संस्कृति, समानता के सिद्धांत, नारी आंदोलन, चयन की स्वतंत्रता, प्रेम विवाह एवं वैधानिक सुविधाएं आदि अनेक कारण भूत तत्व हैं। जिनमें इन क्षेत्रों में स्थापित पुरानी परंपरा टूटी कई अर्थों में यह परंपरा से हटकर क्रांति हुई हैं। नए दृष्टिकोण और नई मान्यताएं स्थापित हुई है। विवाह व्यक्ति के धार्मिक एवं सामाजिक कर्तव्यों की पूर्ति तथा पारिवारिक कल्याण के निमित्त संपन्न होने वाला एक पवित्र

संस्कार है। जो समाज एवं कानून द्वारा मान्यता प्राप्त है। परंतु आज विवाह जन्म जन्मांतर संबंधों से अलग होकर समझौता मात्र रह गया है। इसका जिक्र कमलेश्वर के उपन्यासों में हुआ आज की युवा पीढ़ी के अनुसार स्त्री पुरुष संबंध स्वच्छंद होना चाहिए, जिससे वह जब चाहे जोड़ लिए जाए जब चाहे तोड़ दिए जाएं।

कमलेश्वर के सुबह दोपहर शाम, तीसरा आदमी इत्यादि उपन्यासों में समाज द्वारा निर्धारित रीतियों और परंपराओं के आधार पर हुई विवाह प्रणाली का भव्य नमूना उपस्थित है। आज दहेज जैसी घातक कुरीति ने इस पवित्र बंधन को कलंकित कर दिया। दहेज के बल पर आयोग्य लड़की को भी आसानी से योग्य वर उपलब्ध हो जाते है। आगामी अतीत में कमलबोस निरुपमा से शादी की जो कि योग्य नहीं हैं। उसके पिता की अपार धन-संपत्ति दहेज के रूप में प्राप्त होने की शादी की उसका परिणाम अपने मित्र से व्यक्त किया। "वह एक भयानक हादसा था प्रशांत शादी करना ही एक हादसा था। जिसके बाद मैं कभी चैन से नहीं बैठ पाया।"44 यह लगभव एक अब धारणा बन गई है कि शादी पतन का द्वारा है। या शादी के बाद चैन सुख छिन जाता है।

दूसरी ओर धनाभाव के कारण योग्य युवक-युवतियों योग्य जीवनसाथी के आभाव में भटकते रहते हैं। और अयोग्य साथी चुनने पर मजबूर होना पड़ता है। जिसके फलस्वरूप जिंदगी भर पछतावा ही रहता है। समुद्र में खोया हुआ आदमी में श्यामलाल दहेज की कमी के कारण अपनी सुंदर लड़की समीरा की शादी एक लगड़े से करने के लिए मजबूर होता है। समीरा की मां रम्मी इस अनमेल विवाह से कतराती हुई कहती है मेरी लड़की सुंदर है, और उस लंगड़े के साथ कैसे विवाह होगा ? जब कोई नहीं मिलेगा तो ढकेल दूंगी भाड़ में। पर समीरा की शादी उस लंगड़े से नहीं होने दूंगी। आज समाज में रम्मी जैसी कितनी माँ का आँसू अंतरिक्ष में निराधार व निष्फल होकर गूंज रहा है। क्योंकि आज दहेज के बगैर योग्य लड़के नहीं मिल सकते। आगामी अतीत में भी धन अभाव के कारण चंदा के पिता अपने बच्चे को एक और लंगड़े हरचरण के पल्ले बांधने को विवश होता है। चंदा पति के साथ मज़बूरी से गृहस्थ जीवन बिताती हैं। इसलिए पति की मृत्यु की खबर पाकर भी दुखी नहीं होती। कमलेश्वर ने यहां समाज में व्याप्त दहेज कुप्रथा की निंदा की है।

डाक बंगला की इरा और विमल भी प्रेम विवाह करते हैं। जिंदगी भर संघर्षों से जूझते रहे दांपत्य जीवन में काली दरारें हुई। अंत में विमल की मौत हुई प्रेम विवाह के जोड़ों में जीवन जिंदगी के मझधार में खो जाना, प्रेम विवाह की एक त्रासदी बन गई। विवाहित लोगों को भी परिस्थितियों के

भंवर में फंस जाने के साथ प्रेम विवाह जैसे कटीले मार्ग को चुनने का दुस्साहस करना पड़ता है। वही बात की समीरा सफलता की दौड़ में डूबे पति की प्रतीक्षा में निरंतर अकेलापन महसूस करती रहती है। समीरा नकुल से आकर्षित होकर प्रेम विवाह कर लेती है। दोनों बहुत बहादुरी और पौरुष से इस संबंध को स्वीकार करते हैं। नकूल समीरा से कहता है- "मेरे रहते कौन तुम्हें छू सकता हैं, मीरा? तुमने कोई पाप नहीं किया है। अगर शादी पवित्र है तो तलाक भी उतना ही पवित्र है... तुमने तलाक लिया है.....फिर हम ने शादी की है....तुम इन बातों को लेकर घबराती क्यों हो।"45 लौटे हुए मुसाफिर, एक सड़क सत्तावन गलियां में भी प्रेम विवाह व अन्तर्जाती विवाह का प्रचलन हुआ है।

स्वतंत्रता के कारण विवाह के पहले ही स्त्री पुरुष विवाहित सा जीवन बिताता है। एक सड़क सत्तावन गलियां में पहली मुलाकात में ही बंसिरी अपना सब कुछ सरनाम को समर्पित करती है। किंतु बाद में उसकी शादी नहीं चलती इसमें बंसरी और रंगीली का भी विवाह नहीं चलता। किंतु विवाह के बगैर दोनों विवाहित जीवन व्यतीत करते हैं। जिसे आज लिव इन रिलेशनशिप कहते हैं मुझे लगता है कमलेश्वर के समय में उसका शुरुआती दौर रहा होगा। डाक बंगला में ईरा ओर विमल भी विवाह के बगैर साथ रहने में या मुक्त यौन संबंध को अनैतिकता नहीं समझते है। इरा बतरा के साथ विवाहित सा जीवन बिता रही है। समुद्र में खोया हुआ आदमी में तारा भी हरवंश से शादी करने के पहले गर्भवती हो जाती है। आगामी अतीत में कमलबोस और चंदा के बीच विवाह का वादा चलने के कारण भोली भली चंदा विवाह के पहले ही कमलबोस को अपना तन-मन अर्पण करती है। विवाह पूर्व प्रेम के कारण ही चंदा का गृहस्थ जीवन टूट जाता है। विवाह के बगैर विवाहित-सा जीवन चलाना बिल्कुल आध्यात्मिक मिलन के परंपरागत विवाह संस्कार के विरुद्ध की बात है। कमलेश्वर ने यहां नए सामाजिक मूल्यों और नए सामाजिक संबंधों को स्पष्ट करने के साथ-साथ इसके कुपरिणामों का मर्म स्पर्शी संकेत भी दिया है।

सामाजिक परिवेश से उत्पन्न अकेलापन

अकेलापन या तन्हाई का अनुभव आधुनिक मानव के लिए एक अभिशाप सिद्ध हुआ है। जिंदगी की भाग दौड़ में शामिल हर इंसान मानव शोरगुल भारे भीड़ में भी अकेलापन महसूस कर रहा है। एक सड़क सत्तावन गलियां के अधिकांश पात्र इस तन्हाई ग्रस्त जिंदगी में तड़पते रहते हैं। मजबूत और हिम्मती सरनाम से भी अकेलेपन के हाथों मजबूर होकर उससे छुटकारा पाने के लिए शिवराज की सारी जरूरतें पूरी कर उससे दोस्ती करता है। सरनाम सिंह के साथ रहते हुए शिवराज भी

अकेलेपन का शिकार है। क्योंकि उसका अपना कोई नहीं है। अपने इस अनुभव को वह बंसिरी के सामने प्रकट भी करता है- "मेरा भी मन ऊब जाता है, लेकिन जब तक अपने पैरों पर न खड़ा हो जाऊं तब तक तो बड़ी मुश्किल है। मुझे खुद लिहाज लगता है इस तरह रहते लेकिन अभी कोई रास्ता नहीं।"46 यहां बंसरी भी तन्हाई के अनुभव से दूर नहीं। रंगीले के साथ वैवाहिक जीवन बिताने वाली बंसरी भी दुखी है। उसकी जिंदगी में अपने प्रेमी सरनाम का भी अकेलापन समा जाता है। कार्निवल की किशोरी नर्तकी कमला का जीवन शोर-शराबे व मौज मस्ती से भरपूर है। किन्तु उसके हृदय के अंतराल में जीवन की निरर्थक और नीरसता ही कायम है। यही कारण है कि उसकी जिंदगी के दायरे में दिल बहलाने के लिए कई मदान्ध व्यक्त इकट्ठे होते चले आते हैं। किंतु कोई भी उसकी दुखों को बांटने की सहमत नहीं। उसका दमघुट अकेलापन इन शब्दों में सबल है- "इस कार्निवाल में क्या रखा है शिवराज, मैं तार पर नाचने वाली लड़की हूं। यह पतला से तार और हर पल डगमगाते हुए कदम कब तक साध पाऊंगी अपने को आखिर एक दिन...एक दिन यही तमाशा करते-करते नीचे आ गिरूँगी।"47

डाक बंगला की इरा कई पुरुषों के साथ मुक्त और रंगीन जिंदगी बिताने वाली है। लेकिन लोग यह सच्चाई से अनभिज्ञ है, कि इरा टूटे हुए सपनों के खंडहर में जीने वाली एक अकेली नारी है। उसके लिए हर जिंदगी डाकबंगला जैसी लगती है। उसने अपने लिए एक घर अपने लिए एक पति तथा पति और बच्चों के साथ प्यार भरी जिंदगी गुजरे जैसे कई सपने देखे हैं। दुख की बात यह है कि उसकी कोई भी मनोकामना पूरी हुई बल्कि उसकी जिंदगी बिखर कर अकेलेपन में डूब गई। वह जिंदगी से ऊब कर कहती है- "मेरी जिंदगी बगैर मंजिलों के चलती रही। मैं चिर पथिक हूँ। मेरा पढ़ाव कहीं भी नहीं है। इन पहाड़ी रास्तों में जैसे लोग पैदल चलते हैं वैसे ही मैं आज तक चलती रही हूं।"48 इस उपन्यास में आर्थिक पराधीनता और सामाजिक असफलता से तड़पते विमल का हृदय भी अकेलेपन से बोछिल है। उसे जिंदगी की दौड़ में असफल होकर सारे रिश्तो से दूर अकेला होकर जिंदगी को झेलना पड़ा। काफी धन दौलत के स्वामी बत्रा भी मनपसंद प्रेयसी से शादी न कर पाने के दुख में जिंदगी भर अकेला रह जाता है। अकेलेपन के पागलपन से उसे भी मुक्ति नहीं मिलती। इरा अपनी जिंदगी की तुलना बत्रा की जिंदगी से करते हुए कहती है- "कभी-कभी अकेले में बत्रा की दशा सोचकर मैं रो लेती थी...अपना और उसका अकेलापन बहुत अलग अलग भी नहीं लगता था। वह कैसी टूटी हुई जिंदगी थी।"49 यहां बत्रा के अकेलेपन की तीव्रता स्पष्ट है।

आज की दुनिया केवल मतलब की दुनिया है। यहां कोई किसी के सुख-दुख का हिस्सेदार नहीं, सच्चा हमदर्द या शुभचिंतक भी नहीं, स्वार्थ की सफलता के लिए हर जगह दोस्ती लगाई जाती है। तो कहीं उसकी पूर्ति में सारा रिश्ता वह मैत्री टूट जाती है। आदमी आपस में अजनबी बन जाता है। समुद्र में खोया हुआ आदमी का श्यामलाल दिल्ली की करोड़ों करोड़ों की भीड़ में अपने को बिल्कुल अकेला पाता है। उसका परिवार भी वीरन के समुद्र में खो जाने के दुख में भी एकदम अकेला हो जाता है। उसके दुख को रुककर सुनाने वाला या पहचानने वाला उस महानगर में कोई भी नहीं। रोने की ऊंची आवाज़ थम गई थी। घुटी घुटी सिसकिया और आंसुओं से बोछिल सांसों का शोर अभी बाकी था और वे तीनों फिर अलग-अलग अपने-अपने दुख में अकेले कैद हो गए थे।"50

महानगरी जीवन की त्रासदी

आज की महानगरी संस्कृति औद्योगिक विकास और मशीनी सभ्यता की उपज हैं। स्वतंत्रता के पश्चात पनप गयी दलगत राजनीति और भ्रष्ट नेतासाही महानगरी जीवन में व्याप्त आपसी संबंधों, भाई चारों, सौहार्दपूर्ण वातावरण को जड़ से उखाड़ फेंका। फलतः महानगरों में सब कही कृतिमता, यांत्रिकता, निर्ममता, अजनवीपन, अकेलापन, खुदगर्जी व अनात्मकता तथा विखराव का काला व विशैले बदल छा गये। कमलेश्वर महानगरी जीवन की विसंगतियों को स्पष्ट करने के लिए बड़ा ही सटीक बिम्ब प्रस्तुत किया गया है- "मेला उठने के बाद ही जैसे झहंडिया, सुतलिया, बल्लिया, तोरण और अल्पनाये बिखर और फैल जाती हैं, वैसे ही आजादी का यह मेला उठाते देर नहीं लगती और चारो ओर विखराव, अव्यवस्था, और छितराव नजर आने लगा।"51

दिल्ली जैसे महानगर के मानवीय जीवन में व्याप्त यांत्रिक, छटपटाहट, कोलाहल, भीड़, अकेलापन, अजनबीपन की स्थित का चित्र समुद्र में खोया हुआ आदमी में किया हैं- "अब तो चारों तरफ सन्नाटा है। शोर और भीड़ का वह गहरा सन्नाटा हैं। इस सन्नाटे में टूटती-फैलती और उखड़ती सांसो की आवाज हैं। बदहवासी और संघर्ष है। शंकुतला और छटपटाहट है। भीड़ है और भीड़ के रास्ते हैं....यहां अपना नहीं है ....क्योंकि सब हारती हुई पाली के आजाद लोग हैं...जो सिर्फ एक दूसरे को देखते हैं और हर एक दूसरे को बोझ समझाता है।"52 कमलेश्वर ने नगरीय संस्कृति को उसके वास्तविक रूप में चित्रित किया है। इलाहाबाद से दिल्ली आया श्यामलाल का परिवार नगर के जीवन से संत्रास्त्र व आतंकित हैं। यहाँ के अजनवीपन को महसूस कर समीर कहती हैं- "जब से

परिवार दिल्ली आया, उसे सब लोग परछाई की तरह ही लगने लगे थे। जिनसे दिल्ली की कोई बात न की जा सके, जिनके साथ सुख दुख और अकेलापन बाटा ना जा सके, उन्हें शिवाय परछाई के और क्या समझा जाए।"53

महानगर में किसी के पास सुख-दुख के अनुभव को आपस में बांटकर, बोझ को कम करने या हृदय को और भी संतुष्ट बनाए रखने का समय नहीं। बहुत ही कम होता है कि कोई किसी के दुख या सुख का भागीदार बने। यहां रिश्तो की मानवीय विडंबना का भी कोई खास स्थान नहीं होता। "रिश्तो और रिश्तो के रुख बदल गए हैं...सब लोग व्यक्तियों से बदल गए हैं..वे अपने को और अपनी बात को पहचानने में लगे हुए हैं...खून के रिश्तो से अलग संघर्ष के रिश्ते कायम हो गए हैं। इसलिए दुख और सुख हंसना और रोना बहुत मामूली सी चीजें रह गई हैं, इनका कोई वजूद अब नहीं रह गया है।"54 शहर के अन्य लोग भी परिस्थितियों को जानते हुए भी अंजान बने रहते हैं। "घर में भयंकर खामोशी छा गई थी और घरों में जिंदगी उसी रफ्तार से जारी थी। खाना बनाने की महक और ऊपर कमरे से किसी के गुनगुनाने का स्वर आ रहा था। बीच वालों के यहां रेडियो तेज आवाज में बज रहा था। वह घूमते जाते हुए एक मिनट के लिए भीतर आए थे, बात पता करके चले गए थे।"55

यह सत्य है कि महानगरों में किसी के पास किसी के लिए वक्त नहीं, सहानुभूति नहीं, वास्तव में महानगरी समुद्र में खोया हुआ आदमी वीरन नहीं श्यामलाल है। उस महानगर में ऐसा कोई भी नहीं जो उसे सहारा दे सके या किसी किनारे तक पहुंचा सके। वह सिर से एड़ी तक कर्ज में डूबा हुआ है। उसका परिवार और वह स्वयं महानगर के भीड़ के सैलाब में कहीं खो गए। श्यामलाल की दृष्टि में यह बहुत ही निर्मम और निष्ठुर है। यह निर्ममता, अजनबीपन, अस्तित्व संकट या मृत्युबोध की संस्कृति के परिवेश की ओर उसे धकेल देती है। वह कहता है - "कितना वीरान है यह जन समुद्र.. एक कोलाहल से भरी सड़कें...आदमी पर जीता हुआ आदमी.. इमारते और इमारतों में अपना खून चुसवाते हुए निरीह लोग...किसी के पास किसी के लिए वक्त नहीं है...किसी के पास किसी के लिए करुणा नहीं है। धरती आसमान तक एक लंबी मीनार है जिसके तल में करोड़ों, अरबों, खरबों आदमी खड़े हैं...और इनकी गर्दन पर दूसरें सवार हैं...उन दूसरों पर तीसरा सवार है....उन तीसरो पर चौथे सवार हैं...और आसमान तक यही सिलसिला चला गया है।"56 एक दूसरा उदाहरण है जो श्यामलाल पारिवारिक संबंधों में आए बदलाव को महसूस करते हुए अपने को अकेला फालतू की स्थिति में पाता है - "पति के रूप में बस पति भर रह गए हैं। एक जबरदस्ती का बोझ और पिता

के रूप में सिर्फ पिता कहे जाने भर का सवाल रह गया है। इन दोनों रिश्तो का कोई अर्थ उन्हें दिखाई ना दे रहा था।"57

लौटे हुए मुसाफिर में भी नगरी परिवेश से उत्पन्न अजनबीपन का चित्रण हुआ है- "और अब तो इस अवसर में बिजली भी लग गई। एक नई जिंदगी की झलक मिल रही है। लेकिन जब तक अपने कहे जाने वाले अपने पास ना हो नई जिंदगी भी बहुत पुरानी और बोझिल लगती है। वह बोझ सा था नसीबन के दिल पर।"58 यह नसीबन को अपनों से बिछड़ने का दर्द है। पूरी बस्ती ही वीरान हो गई थी। कस्बे का व्यक्ति महानगरी जीवन की विसंगतियों, यांत्रिकता, भीड़, अकेलापन, निरर्थकताबोध, संवेदनहीनता के परिवेश में आते-आते कैसे टूट कर बिखर जाता है। यहां व्यक्ति ही नहीं सारे मूल्य ही टूटते व विखरते रहते हैं। तीसरा आदमी की स्थिति को देखते हुए डॉक्टर अमर प्रसाद जायसवाल ने लिखा है कि "आकार में लघु होते हुए भी अपना विस्तार और गुणधर्म में कृति विस्मृत है। उसमें कम शब्दों में सांकेतिक भाषा द्वारा एक कस्बे का आदमी महानगर में आते-आते कैसे टूट जाता है, इसका सशक्त चित्रण लेखक ने इस रचना ने किया है। यह लघु उपन्यास और महानगरीय जीवन की जोड़ती हुई कड़ी के रूप में सामने आता है।"59

महानगरीय जीवन में सामान्य कस्बों व गांवों से आने वाले व्यक्ति की नियति जैसे टूटने विखरने की दुर्भाग्य की नियति होती है। नरेश दिल्ली आकर यह महसूस करता है कि यह महानगर का जीवन उसके लिए नहीं है या उसके लिए बहुत ही कठिन है। और शायद शहर व व्यक्ति की यह नियति भी होती है कि हर शहर में हर व्यक्ति व हर व्यक्ति शहर का नहीं हो पाता है। नरेश के साथ भी यह होता है। नरेश कहता है- "दिल्ली आकर मेरी जिंदगी कि यह बहुत छोटी सी सार्थकता भी मर गई थी और धीरे-धीरे मेरे भीतर का इंसान खंडित होता जा रहा था।"60 दिल्ली में आकर तो में और गरीब हो गया था मन में कहीं यह बात भी टीसती रहती थी, कि दिल्ली आकर मैंने अपनी खुद की जिंदगी को और भी खो दिया। इलाहाबाद में तो कुछ फिर भी कुछ होने का एहसास होता था। यहां नरेश की सारी महत्वाकांक्षा है धराशाई हो उठी। वह निरंतर इस दबाव में जकड़ा जा रहा था। और आगे कहता हैं- " लगता था कि एक पुराने मकान में बसा दिया गया हू और उसमें मृत्यु पर्यंत जीना ही मेरी नियति है।"61 और नरेश का कमरा शहर की जिस गली में है वह तंग और गंदी गली है जिसका जिक्र वह इस प्रकार से करता है- " दिन भर की थकान के बाद कोई भी अपने कमरे में चैन की नींद नहीं सो सकता। सारे कपड़ों का रंग और बू एक खास किस्म की हो जाती है और बिस्तर सड़े हुए अनाज की तरह महकने लगता है।"62 इस घुटन भरी जिंदगी में

व्यक्तियों के मन में मुक्त के लिए एक अजीब सी छटपटाहट रहती है- "रात होते-होते मन इतना छटपटाता था कि दीवारें तोड़कर कमरे को कुछ और खुला करने के लिए अकुलाने लगता था।"63

इस प्रकार कमलेश्वर के उपन्यासों में पारिवारिक परिदृश्य सामाजिक समस्याएं स्वतंत्र भारत के मूल्यों की उपज है। आजकल घर के सदस्यों के बीच पहले जैसे पवित्र और आत्मीय संबंध और आपसी विश्वास उस मात्रा में नहीं रह गए हैं। अब पारिवारिक रिश्ते नाम मात्र या औपचारिकता में बदलते जा रहे हैं। यह भी नहीं आज के रिश्ते स्वार्थ का वेश धारण कर केवल अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए ही आत्मीयता का नाटक करते हैं। पारिवारिक संबंधों में आए इस बदलाव ने समूचे समाज व देश के ढांचे को भी हिला दिया है। इस बदलाव को कमलेश्वर ने अपने उपन्यासों में बखूबी चित्रित किया है।

कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन का सांस्कृतिक पक्ष

संस्कृति क्या है ? यह एक कठिन पर महत्त्वपूर्ण सवाल है। संस्कृति परंपरा की द्योतक है। उसमें हमारी परम्पराएं समाहित है। उसमे हमारी सभ्यता का उज्जवल पक्ष समाया हुआ है। संस्कृति मानव सभ्यता के विकाश की संचित कोश है। इसमे हमारी पुरानी से पुरानी थाती संचित है। और इस थाती के माध्यम से ही हम अपने संस्कृति-सभ्यता के हजारों-हजार साल पुराने रीति-रिवाज व परंपराओं से जुड़ जाते है। संस्कृति कोई सिद्धांत नहीं है बल्कि मानव सभ्यता में जो सबसे अधिक मूल्यावन तत्त्व है उन मूल्यों का ही स्रोत है। जो हमारे जीवन में घुले-मिले होते है। मनुष्य के निर्माण में उसकी अहम भूमिका है।

संस्कृति समस्त मानव जीवन को परिमार्जित परिष्कृत एवं विशुद्ध करने वाली जीवन की आचार पद्धति है। समस्त विश्व की मानव संस्कृति परिवेश की भिन्नता के कारण अलग है। उसकी मूलभूत विशेषताएं समान है। ऐतिहासिक परिस्थितियों एवं भौगोलिक विशेषताओं का किसी देश की सांस्कृतिक एकता में महत्वपूर्ण योगदान है। साथ ही हमारे सांस्कृतिक मूल्य निर्धारण में भी इनका योगदान है। "संस्कृति मानव जीवन की भूत, वर्तमान और भविष्य की निधि है। जिससे उसके और

उसके पूर्वजों के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, वैज्ञानिक एवं कला सौंदर्य बोध अर्थात समस्त जीवन मूल्य प्रतिध्वनित होते हैं।"64

संस्कृति रीत-रिवाज, परंपराओं, साहित्य, लोकगीत, महाकाव्य एवं कलाओं में दिखलाई देती हैं । जीवन के समस्त सम मानदंड कर्तव्य एवं अन्य सामूहिक क्रियाकलाप वस्तुएं इसकी सीमा में आते हैं । वैचारिक एकता एवं आदर्शों की समता मानव को घनिष्ट बना देती है। यह अटूट बंधन होता है। रामधारी सिंह दिनकर जी के शब्दों में- "संस्कृति वह चीज मानी जाती है जो हमारे सारे जीवन.....तथा जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभव का हाथ है। यही नहीं बल्कि संस्कृत हमारी पीछा जन्म जन्मांतर तक करती है।"65 किसी देश की संस्कृति वहां के लोगों का रहन-सहन, रीति-रिवाज, भौगोलिक स्थिति के परिवर्तन के साथ साथ बदलती रहती है। हिंदी साहित्य कोश में संस्कृत विषय की चर्चा इस प्रकार की गई है- "देश की संस्कृति से इस मानव जीवन तथा व्यक्तित्व के उन रूपों को समझ सकते हैं, जिन्हें देश विदेश में महत्वपूर्ण अर्थात मूल्यों का अधिष्ठान समझा जाता है।"66

भारतीय संस्कृति का रूप हमें सामाजिक दिखलाई देता है। तथा इसके विकास की गति हमें मंद एवं मंथर दिखाई देती है। इसका रूप समाजवादी है। आर्यों ने हिंदू संस्कृति का निर्माण करते समय ऐसा लचीला रूप पसंद किया, जो प्रत्येक नई संस्कृति से लिपट कर उसे अपनी बना सके। हमारे देश की सांस्कृतिक सनातन है। इस पर बौद्ध तथा ईसाई आदि धर्मो का प्रभाव भी पड़ा, जिससे इसका रूप भी कुछ परिवर्तित हुआ। यह बात हमारे देश की शासन व्यवस्था उसकी सामाजिक संगठन दर्शन साहित्य तथा कला आदि पर भी लागू होती है। भारतीय संस्कृति अपने को कूप मंडूक नहीं बनाया। और इसे जहां से भी कोई अच्छी चीज मिलने वाली थी उसे इसने आगे बढ़ाकर स्वीकार कर लिया है। यही कारण है कि हिंदू धर्म में हम विश्व के तमाम धर्मों के असली तत्व का निचोड़ पाते हैं। इसलिए अब हमारी संस्कृति वही नहीं है, जो वेदकालीन आर्यों की थी, और शुद्ध-शुद्ध वह भी नहीं, जिसकी रचना आर्यो और द्रविड़ो ने मिलकर की थी। आर्यों और द्रविड़ो के मिलन के बाद भी अनेक जातियां इस देश में आए और उन सब ने हमारी संस्कृति को कुछ न कुछ अंश इसमे मिला है। हमारे अपने देश में बुद्ध और महावीर के नेतृत्व में प्रबल धार्मिक क्रांति हुई और उस क्रांति की भी पूरी छाप हमारे धर्म और संस्कृति पर भौजूद है। हमारी भारतीय संस्कृति की अनेक विशेषताएं हैं। जो उसे दूसरे देशों की संस्कृति से पृथक करती है। भारतीय संस्कृति की

प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित : समन्वय की भावना। भारत बहूदेवी देवताओ वाला देश है। यहाँ धार्मिक पूजा उपासना के अनेक रूप विद्यमान हैं। हिंदू धर्म में दार्शनिक, भक्ति सिद्धांत, सिद्धि, निर्वाण प्राप्ति के बहुमार्ग प्रचलित हैं। निग्रो से लेकर हूणों तक इस देश में आने वाली सभी जातियां लचीलापन के कारण हिंदू समाज में खप गयीं। प्रसिद्ध इतिहासकार डाडवेल ने लिखा है कि- "भारतीय संस्कृति महा समुद्र के समान है, जिसमें अनेक नदियां आकर विलीन होती रही है।"67

कमलेश्वर भारतीय संस्कृति व्याख्याता तो नहीं है लेकिन भारतीय संस्कृति की आत्मा को समझते है। भारतीय संस्कृति के उदार स्वरूप को समझते है। उसके गहराई व गंभीरता को समझते है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति उनके हृदय में अगाध स्नेह एवं आकर्षण हैं। जो उनके औपन्यासिक कृतियों में सम्यकरूपेण अभिव्यक्त हुआ है। भारतीय जीवन व्यवस्था एवं पद्धति के प्रति उनके हृदय में आस्था व विश्वास है। भारतीय सांस्कृतिक मूल्य उन्हें अतिप्रिय हैं। भारतीय संस्कृति की एकता की भावना के वे सम्पोषक हैं। भारतीय संस्कृति वर्णन ही उनके साहित्य की शोभा है। भारतीय साहित्य एवं संस्कृति के अनुसार नारी पूज्या हैं। हमारी संस्कृत में पति-पत्नी सम्बन्धों में पूज्यभाव स्थिर रूप से हमेशा ही रहता है। पति पत्नी को परमेश्वर भाव से देखती है तथा वह स्वयं लक्ष्मी रूपा होती है। भारतीय नारी का यह बड़प्पन है कि वह अपने को पुरुष से छोटा मानती हैं। अधिक सम्मानीय, अधिक धनार्जन करने वाली पत्नी अपने हीन पति को भी सम्माननीय मानती हैं। कमलेश्वर के उपन्यासों में इधर जो सांस्कृतिक विघटन या परिवर्तन की स्थितियां पैदा हो रही है। या जो परंपरागत संस्कार टूट रहे हैं उनकी चटक भी विद्यमान है। इसको हम उनके उपन्यासों में देख सकते हैं।

कमलेश्वर ने अपने उपन्यास काली आंधी में भारतीय संस्कृति के महानता की झलक इस प्रकार प्रस्तुत की है। मालती एक संपन्न नेता है। वह अपने पति की अपेक्षा कहीं अधिक लोकप्रिय हैं। वह अपने पति जग्गी बाबू से अधिक कमाते हुए भारतीय नारी होने के कारण और पति के प्रति पूर्ण रूपेण समर्पित होकर कहती हैं- "जी! यही है मेरे पति। पति परमेश्वर, मेरे दोस्त, मेरे प्रेमी... जो कुछ भी है, यही है।"68 इस प्रकार भारतीय नारी का सर्वस्व उसका पति ही होता है। पति पत्नी में जब अत्यधिक प्रेम होता है, तो वह प्रेमी प्रेमिका की तरह ही रहते हैं। दोनों एक दूसरे के प्रति समर्पित रहते हैं फिर भी पत्नी पति को बड़ा ही समझती है। पत्नी पति के बड़प्पन को भूलती नहीं। इस स्थिति का वर्णन कमलेश्वर में सुबह दोपहर शाम उपन्यासों में चित्रित किया है। जसवंत की नई नई शादी होती है। उसके रेलवे में नौकरी लग जाती है। जसवंत एक रात अपनी पत्नी के

लिए चांदी की पायल आता है, और उसे पहनाने लगता है तब उसकी पत्नी ने भावो में ना खोकर संस्कृति के अनुसार आचरण करती हुई अपने पति से कहती है कि- "नहीं...पैरों को हाथ मत लगाओ मुझ पर पाप पड़ता है।"69 कहते हुए उसने अपने आप पहल ली। यह जो भावना है वह आज भी हैं।

भारतीय संस्कृति में वृद्धजन सम्मान पर बल दिया जाता है। हमें वृद्धोपसेवी होना चाहिए। संयुक्त परिवार में वृद्धजनों का एक-एक शब्द महत्वपूर्ण होता है। घर के कार्यों में उनका निर्णय महत्वपूर्ण होता है। उनका पूर्ण सम्मान होता है। जसवंत के माता-पिता की हिम्मत नहीं की बड़ी दादी के सामने कुछ बोल जाए। उसकी अम्मा सिर झुकाए सफाई में लगी रही। बापूजी अपनी चुटिया टोपी के नीचे करके गर्दन पर खुजाते हुए बाहर की तरफ टहल गयें। बड़ी दादी का कहना टाला नहीं जा सकता था। रात को ही अम्मा ने उसके बड़े बड़े बालों में तेल लगाया था। वह सर खोल कर बैठ गई तो उन्होंने डाटा था- "कुछ आया शर्म भी सीख ले...अब तू बड़ी हो गई है। तो सर कैसे डाकू बालों में तेल लगा रही हो आम्मा....ऐसे कह कर उन्होंने उसकी धोती का पल्ला उसके हाथों में थमा दिया था और बताया था कि पल्ले को आँखों पर जब तक लगाए रहे तब तक सर खुला रहे।"70 इसी प्रकार का चित्रण समुद्र में खोया हुआ आदमी उपन्यास में भी देखने को मिलता है। समीरा की मां रम्मी समीरा से कहती है कि और वह अपनी मां के कथन का पालन करते हुए पल्ला अपने सिर पर डाल लेती है। "ज्यादा फैशन करने की जरूरत नहीं है। सीधी चोटी करो ।...और साड़ी का पल्ला सीधे पडे.. समझी।"71

समाज में एक दूसरे के प्रति सद्भाव रखना, सुख दुख बांटना, सांस्कृतिक एकता एवं सद्भावना का परिचायक है। लौटे हुए मुसाफिर में बच्चन के बच्चे की हड्डी टूटने पर नसीबन उसकी पड़ोसीन होने के नाते वह वह वहीं रुकी रही। रात भर नसीबन रमुआ के बिस्तर के निकट बैठी रही। बच्चन ने कहा कि कुछ देर शोले लेकिन वह जरा भी हटी नहीं। मर्द नहीं समझ सकते बाल बच्चों का सुख-दुख । सारे बच्चे किसी भी जात धर्म अथवा वर्ग के हो- बच्चे तो बच्चे हैं। लेकिन तथाकथित समाज के ठेकेदार युद्ध इन्हें पददलित करने पर उतारू रहते हैं। नसीबन बच्चन के बच्चों को अपने घर ले आती है तो साई इस बात का बहुत बुरा मानता है। नसीबन भारती संस्कृति का एक उज्जवल पहलू निखारती हुई दो टुक उत्तर देती है- "साई असल बात यह है कि ये बच्चे तुम्हारी आंखों में खटक रहे हैं। मेरे लिए धर्म- कर्म का सवाल नहीं है। साईं सीधी सी बात है मुझसे इन बच्चों को विलखता नहीं देखा गया। सो ले आई कल को इनका बाप आ जाएगा तो चले जाएंगे।"72

जो भारतीय संस्कृति हैं यह बेमिसाल है कि बच्चे बच्चे होते हैं और किसी के भी हो। आज भी यह भारतीय संस्कृत में ही देखने को मिलता है।

हमारे समाज में कथा कथित मठाधीश बैठे हुए हैं जो समाज के लोगों को जात-पात ऊंच-नीच के चक्कर में डालकर हर प्रकार से अपना उल्लू सीधा करते हैं। भारतीय संस्कृति के ज्ञाता एवं इन की मानने वाले समाज के ठेकेदारों के झलावे में नहीं आते। और सदैव भाईचारा विश्व बंधुत्व एकता नैतिकता एवं पारस्परिक सौहार्द पर बल देते हैं। तथा मलिन तुच्छताओं से ऊपर उठकर मानव सेवा एवं कल्याण कर्म में निरत रहते हैं। लौटे हुए मुसाफिर उपन्यास में बच्चन पुलिस के भय से भाग जाता है। तथा उसके बच्चों को नसीबन अपने घर ले जाकर अपने औदार्य का सहज परिचय देती है। कुछ हिन्दू आकर बच्चों को अनाथालय भेजने पर बल देते हैं। लेकिन नसीबन उन्हें अनाथ कदापि नहीं बनाना चाहती। वह स्पष्ट करती है- "कैसे कर दू काहे को कर दूश्कल को इनका बाप आएगा तो यह भी हंसी ठठ्ठा है ? अरे ! ये बच्चे हैं कोई काठ-किवाड़ तो नहीं, जो पड़े रहेंगें वहाँ, खूब आए आप लोग, बच्चे हवाले कर दो। नसीबन बिफर पड़ी वाह भई वाह जो करना हो करो जाकर पुलिस नहीं लटैन इनको बुला लाओ।"73

औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से हमारी संस्कृत में भी कुछ विकृति आ गए हैं। परंतु ग्रामों में प्रायः विशुद्ध भारतीय संस्कृत के दर्शन आज भी किए जा सकते हैं। इसका वर्णन कमलेश्वर ने आगामी अतीत के अति सुंदर ढंग से किया है। चंदा कमलबोस को नगरी तथा ग्रामीण संस्कृति में अंतर स्पष्ट करते हुए कहती है कि- "यो घर पर कोई लड़की किसी को खुलकर....सामने आकर देखती है क्या? यह तुम्हारे कोलकाता में होता होगा....।"74 समाज में नैतिकता एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है फिर भी हमारे देश में नैतिकता के पुजारियों की कमी नहीं है।

आगामी अतीत में कमलबोस को एक बड़े उद्योगपति के रूप में चित्रित किया गया है। हमारे समाज के आर्थिक रूप से संपन्न धनी वर्ग में जो नैतिकता धीरे-धीरे खिसक रही है। परंतु कमलबोस अपने साले रविंद्र सेन को बचाने के लिए कदापि झूठ नहीं बोलता। वह निर्दोष रतन शंकर को बचाने के लिए अपनी पत्नी से भी झगड़ा मोल ले लेता है। तथा सत्यता व इईमानदारी का पक्ष लेता है। जहां उच्च वर्ग में ईमानदारी पाई जाती है, निम्न वर्ग में ईमानदारी व नैतिकता दोनों पायी जाती हैं।

चांदनी एक वेश्या है, निर्धन है। वह अपनी निर्धनता एवं ईमानदारी का संबंध बताते हुए कमल से कहती है- "अम्मा कहती थी, इईमानदार लोग हमेशा गरीब रहते हैं। गरीबी इस बात का सबूत है कि हम ईमानदार हैं।"75 हमारे आधुनिक समाज में पुराने संस्कार आज भी जीवित हैं। एक सड़क सत्तावन गलियां उपन्यास में एक डाकू की नारी के प्रति सहृदयता भारतीय संस्कृति का प्रत्यक्ष उदाहरण है। सरनाम डाकू हैं। वह डाका डालने जाता है वहां उसके साथी महिला बंसरी को अकेला पाकर पकड़ लेते हैं। नारी के प्रति अत्याचार देख गिरधारी से कह उठता है। वेधर्मी नहीं होगी गिरधारी...जाओ बंदूक समालो। इस प्रकार हो बंसिरी को बचाकर मानवीय उच्च संस्कारों का परिचय देता है। इससे भारतीय संस्कृति की समृद्धि बढ़ती है। देश की अनमोल विरासत सांस्कृतिक उदारता से परिपूर्ण मानी जाती है। कमलेश्वर अपनी श्रेष्ठ उपन्यास कितने पाकिस्तान में इस प्रकार कह उठते हैं- "संस्कृति अनुदार नहीं, उदार होती है...वह मरण का उत्सव नहीं मनाती, वह जीवन के उत्सव की अनवरत श्रृंखला है. इसी सामाजिक संस्कृति की जरूरत हमें है क्योंकि वह जीवन का सम्मान करती है।"76

भारतीय संस्कृति उदार है। मानवीय मूल्यों से सुशोभित है। त्याग समर्पण की भावना इसके स्वभाव में है। उच्च मानवीय गुणों की स्थापना भारतीय संस्कृति की मूल चेतना है। और यह जिम्मेवारी हर भारतीय की है वह अपने सभ्यता-संस्कृति के संरक्षण के लिए प्रयास करें। संस्कृति किसी भी देश की पहचान होती है। हम भारतीयों की पहचान अपने सांस्कृतिक मूल्यों के कारण पूरे विश्व में अद्‌वितीय है। अनेकता में एकता की भावना भारतीय संस्कृति का प्राण तत्त्व है। तमाम विरोधी व विषमताओं के बावजूद समरसता इसकी सास है। गंगा-जामुनी तहजीब को फलीभूत करना, इसके तमाम अंतर्द्‌वद्‌व के ऊपर जीत है। और कमलेश्वर लगातार इस गंगा-जामुनी तहजीब को बचाने की लगातार कोशिश कर रहे है। इसके आत्मा को बचते हुए नजर आते है। एक साहित्यकार के रूप में यह दाय बहुत बड़ा दाय है। इस प्रकार निष्कर्ष हम कह सकते हैं कि कमलेश्वर जो कि स्वयं एक संस्कृति के अध्येता साहित्यकार हैं। तो उनके लेखन में संस्कृति के विविध पक्षों की गंभीर जांच पड़ताल करते की बात निकल कर सामने आती है। और वे अपनी संस्कृति की समृद्‌धि एवं उसकी रक्षा के लिए अपने लेखन में जगह दी है। संस्कृति के अक्षुण्ण परंपरा जैसे एकता, भाईचारा, सौहार्द जो मानवीय हुए उसे समृद्‌ध करने प्रेम को लगातार समृद्‌ध करने वाले तत्व हैं, उन पर उनका लगातार जोर बना रहा। और उनके साहित्य में संस्कृति की एक समृद्‌ध परंपरा विद्‌यमान है। वे संस्कृत के पोषक संस्कृति रक्षक एवं उसको विस्तार साहित्यकार हैं।

इस अध्याय के अंतर्गत कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन व उसकी विसंगतियों को रेखांकित किया गया है। मनुष्य का जीवन एक गतिशील जीवन है। उसके पास विचार की शक्ति है। और विचरों में भी मौलिक विचार की शक्ति है। और यह मौलकता उसे अपने परिवेश से प्राप्त होती है। और इससे ही समाज मे नए तरह के विचारों का उदय होता है। इसी मौलिकता व विचारों के कारण समाज में निरंतर परिवर्तन होता रहा है। और यह एक सतत प्रक्रिया है। यह मनुष्य के जीवन तक होती रहने वाली क्रिया है। लेकिन समय व समाज के अनुसार इसी मौलिकता व विचारों के दौरान कुछ ऐसे परिवर्तन भी आते है जो विकृति के तौर पर रेखांकित होते है। आगे चालकर यह विकृतियाँ भले ही हमारे समाज की हिस्सा बने और यह समय तक यह विकृतियाँ ही होती है। इस रूप में कमलेश्वर के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन व उसकी कई तरह की विकृतियों व विसंगतियों पर विचार किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ-

1.गोपेश्वर सिंह भक्ति आंदोलन और काव्य वाणी प्रकाशन संस्करण 2017 पृ.10

2.डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.10

3. सं. सत्यप्रकाश मिश्र प्रेमचंद के श्रेष्ट निबंध लोकभारती प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.80

4.डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.11

5.डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.11

6.डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.11

7.डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.12

8.शिवकुमार मिश्र सांप्रदायिकता व हिन्दी उपन्यास वाणी प्रकाशन संस्करण 2015 पृ.24

9. डॉ. जागृति पंड्या सातवें दशक के उपन्यासों में समसामयिक चेतना पैराडाइस प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.12

10.आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लोकभारती प्रकाशन संस्करण 2012 पृ.367

11.रामचन्द्र तिवारी हिन्दी का गद्य-साहित्य विश्वविद्यालय प्रकाशन संस्करण पृ.190

12.रामचन्द्र तिवारी हिन्दी का गद्य-साहित्य विश्वविद्यालय प्रकाशन संस्करण 2012 पृ.190

13.सं. सत्यप्रकाश मिश्र प्रेमचंद के श्रेष्ट निबंध लोकभारती प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.113

14.सं. मुश्ताक अली अभिनव निबंध संग्रह हिन्दी परिषद प्रकाशन संस्करण 2010 पृ.137

15.रामचन्द्र तिवारी हिन्दी का गद्य-साहित्य विश्वविद्यालय प्रकाशन संस्करण 2012 पृ.194

16.रामचन्द्र तिवारी हिन्दी का गद्य-साहित्य विश्वविद्यालय प्रकाशन संस्करण 2012 पृ.194

17.डॉ. पी. एम. थामस भारतीय मध्यवर्ग और सामाजिक उपन्यास समसामयिक उपन्यासों जवाहर पुस्तकालय प्रकाशन संस्करण 1995 पृ.38

18.यशपाल कथा साहित्य और मध्यवर्ग वाणी प्रकाशन संस्करण 1980 पृ.11

19.सं. संजय कुमार कथा साहित्य और मध्यवर्ग वाणी प्रकाशन संस्करण 2010 पृ.71

20.श्याम सुंदर घोष कथा साहित्य व मध्यवर्ग राजकमल प्रकाशन संस्करण 1996 पृ.13

21.आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लोकभारती प्रकाशन संस्करण 2012 पृ. 308

22.कमलेश्वर नयी कहानी की भूमिका राजकमल प्रकाशन संस्करण 2015 पृ.26

23.बाबूलाल गुप्त उपन्यासकार नागार्जुन लोकभारती प्रकाशन संस्करण 2008 पृ.12

24.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.12

25.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.40

26.कमलेश्वर सुबह दोपहर शाम राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.34

27.डॉ. दिनेशचंद्र वर्मा स्वातन्त्र्योंत्तर हिन्दी नाटकसमस्या और समाधान पृ.78

28.कमलेश्वर डाक बंगला राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.65

29.कमलेश्वर डाक बंगला राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.37

30.कमलेश्वर डाक बंगला राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.73

31.कमलेश्वर आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.55

32.कमलेश्वर डाक आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.48

33.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.28

34.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.48

35.कमलेश्वर आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.70

36.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.28

37.कमलेश्वर वही बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.28

38.कमलेश्वर वही बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.54

39.कमलेश्वर वही बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.58

40.कमलेश्वर पति पत्नी और वह बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.42

41.कमलेश्वर वही बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.83

42.सं. मधुकर सिह कमलेश्वर शब्दकार प्रकाशन संस्करण 1977 पृ.194

43.कमलेश्वर सुबह दोपहर शाम राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.130

44.कमलेश्वर आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.45

45.कमलेश्वर वही बात राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.54

46.कमलेश्वर एक सड़क सत्तावन गालियां राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.69

47.कमलेश्वर सुबह दोपहर शाम राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.85

48.कमलेश्वर डाक बंगाल राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.23

49.कमलेश्वर डाक बंगाल राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.50

50.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.74

51.कमलेश्वर नयी कहानी की भूमिका राजकमल प्रकाशन संस्करण 2015 पृ.28

52.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.17

53.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.5

54.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.16

55.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.55

56.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.66

57.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.65

58.कमलेश्वर लौटे हुए मुसाफिर राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.

59.अभय प्रसाद जायसवाल हिन्दी लघु उपन्यास राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2014 पृ.23

60.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.38

61.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.78

62.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.31

63.कमलेश्वर तीसरा आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.32

64.सुधारानी सिह कमलेश्वर जीवन यथार्थ के शिल्पी वाणी प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.181

65.सुधारानी सिह कमलेश्वर जीवन यथार्थ के शिल्पी वाणी प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.182

66.सुधारानी सिह कमलेश्वर जीवन यथार्थ के शिल्पी वाणी प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.182

67.सुधारानी सिह कमलेश्वर जीवन यथार्थ के शिल्पी वाणी प्रकाशन संस्करण 2013 पृ.182

68.कमलेश्वर काली आंधी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.91

69.कमलेश्वर सुबह दोपहर शाम राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.47

70.कमलेश्वर सुबह दोपहर शाम राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.44

71.कमलेश्वर समुद्र में खोया आदमी राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.87

72.कमलेश्वर लौटे हुए मुसाफिर राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.122

73.कमलेश्वर लौटे हुए मुसाफिर राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.128

74.कमलेश्वर आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.22

75.कमलेश्वर आगामी अतीत राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.88

76.कमलेश्वर कितने पाकिस्तान राजपाल एण्ड संज प्रकाशन संस्करण 2020 पृ.182